विज्ञान किरण

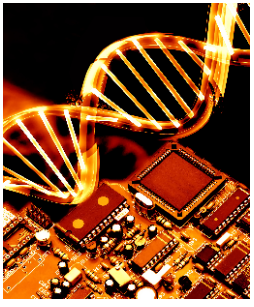

आवरण : डीएनए संरचना
उपकरण का इलेक्ट्रॉनिक सर्किट

विज्ञान किरण

सीएसआईआर–सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान, सैक्टर–39ए, चण्डीगढ़
सीएसआईआर–केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, सैक्टर–30सी, चण्डीगढ़

कॉपीराइट : सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशन वर्ष : 2013

प्रकाशक :
निदेशक
सीएसआईआर–सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान, सैक्टर–39 ए, चण्डीगढ़
एवं
सीएसआईआर–केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, सैक्टर–30 सी, चण्डीगढ़

महानिदेशक की कलम से ...

संदेश

हर्ष का विषय है कि सीएसआईआर–केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआईओ) और सीएसआईआर–सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक) टीम भावना का परिचय देते हुए अपने–अपने अनुसंधान क्षेत्रों से संबंधित विषयों पर मिलकर पुस्तक का प्रकाशन कर रहे हैं। मेरा मानना है कि दृढ़ संकल्प एवं मज़बूत इरादों के साथ आरंभ किया गया कोई भी कार्य निश्चित तौर पर अपने उद्देश्य को प्राप्त करता है। सीएसआईआर की गतिविधियों और अनुसंधान एवं विकास कार्यों को स्कूली बच्चों तथा जनसाधारण तक पहुंचाने के लिए की गई यह पहल निःसंदेह अद्वितीय एवं सराहनीय है। आशा करता हूँ कि इस पुस्तिका का प्रकाशन उपयोगी सिद्ध होगा और भावी पीढ़ी को सीएसआईआर जैसे अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय संगठन के क्रियाकलापों के बारे में और अधिक जानकारी मिल पाएगी और अधिकाधिक विद्यार्थी विज्ञान विषय को कैरियर के रूप में चुनने के लिए प्रेरित होंगे।

पुस्तक के प्रकाशन से जुड़े सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को संपूर्ण सीएसआईआर परिवार की ओर से हार्दिक बधाई और पुस्तक के उज्ज्वल भविष्य के लिए शुभकामनाएं।

(प्रो. समीर के. ब्रह्मचारी)

निदेशक की कलम से .....

खूबसूरत शहर चण्डीगढ़ में स्थित सीएसआईआर की दो उर्ध्वगामी प्रयोगशालाओ, सीएसआईआर-सीएसआईओ व सीएसआईआर-इमटैक का संयुक्त प्रयास - यह विज्ञान पत्रिका, आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत प्रसन्नता एवं संतोष का अनुभव हो रहा है । किशोरों में विज्ञान की ओर घटते रुझान पर चिंता तो काफी समय से व्यक्त की जा रही है परन्तु विज्ञान एवं वैज्ञानिक शोध को उनके सामने इंद्रधनुषी रंगो में परोसा जा सके, इस आशय के प्रयासों का मूर्त रूप सामने नहीं लाया जा सका था । इन्हीं विचारों से उद्वेलित यह पत्रिका जैव प्रौद्योगिकी एवं अभियांत्रिकी के क्षेत्र से कुछ रोचक लेखों के साथ प्रस्तुत की जा रही है जिसका लक्ष्य दसवीं से बाहरवीं के छात्रों को इन प्रयोगशालाओं के शोध कार्य से हस्तामलकवत् परिचित कराना व उनकी वैज्ञानिक क्षुधा को पोषित करना है ।

उदीयमान प्रतिभावान छात्रों में विज्ञान क्षितिज के विस्तार का लक्ष्य सिद्ध हो, इस शुभकामना के साथ, दोनों संस्थानों की प्रकाशन टीमों को हार्दिक बधाई !

निदेशक

संरक्षक

डॉ. गिरीश साहनी, निदेशक

सम्पादकीय समिति के सदस्य

सीएसआईआर–इमटैक के सदस्य :

- डॉ. जी. एस. प्रसाद, वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक
- डॉ. अनिर्बान राय चौधरी, वरिष्ठ वैज्ञानिक
- डॉ. अश्विनी कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक
- श्री गैरी बेदी, वैज्ञानिक
- श्री कैलाश भामरे, वैज्ञानिक
- सुश्री नवनीत आनंद, हिन्दी अधिकारी
- सुश्री गुंजन शर्मा, वरिष्ठ शोधकर्ता
- श्री कमल जैन, वरिष्ठ शोधकर्ता

सीएसआईआर–सीएसआईओ के सदस्य :

- डॉ. आमोद कुमार, मुख्य वैज्ञानिक
- डॉ. सुनीता मिश्रा, प्रधान वैज्ञानिक
- श्री संजीव कुमार, वैज्ञानिक
- श्री संदीप सिंघई, वैज्ञानिक
- सुश्री पूजा, वैज्ञानिक
- श्री स्वर्णजीत सिंह, तकनीकी अधिकारी
- डॉ. नीरू, वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी
- डॉ. लोकेश शर्मा, वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक

विषय सूची

I सीएसआईआर : एक परिचय
II सीएसआइओ : एक परिचय
III इमटैक : एक परिचय

1. सूक्ष्मजीवों का संसार
2. किण्वनः एक अनवरत यात्रा
3. हृदयघात उपचार में स्ट्रेप्टोकाइनेज़ की नई बुनियादें
4. सूक्ष्मजीवीय लाइपेज़
5. मलेरिया
6. क्षयरोग (टी.बी.) : एक अनसुलझी समस्या
7. पशु गृह – प्रयोगमूलक पशु सुविधा
8. जैव सूचना केन्द्र
9. सूक्ष्म अणुओं : परिचय एवं उपयोग
10. विकिरण विधि द्वारा कैंसर उपचार
11. एनस्थीसिया
12. विकलांगों के लिए कृत्रिम उपकरण
13. भूकंप पूर्व चेतावनी प्रणाली
14. प्राकृतिक आपदाएं एवं हिमस्खलन
15. वैमानिक प्रदर्श प्रणाली : हेड अप डिस्प्ले
16. फोटोनिक्स तथा फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर
17. कृषि प्रयोग के लिए इलैक्ट्रोस्टेटिक स्प्रेयर

सीएसआईआर : एक परिचय

भूमिका

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विविध क्षेत्रों में अपने अग्रणी अनुसंधान एवं विकास ज्ञानाधार के लिए विख्यात, वर्ष 1942 में स्थापित वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् (सीएसआईआर) समाज की सेवा में समर्पित एक प्रमुख अनुसंधान, विकास एवं इंजीनियरी संगठन है। सीएसआईआर की स्थापना एक स्वायत्तशासी निकाय के रूप में हुई, जिसके अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं। अपने अस्तित्व के समय से ही प्रत्येक सरकार के सहयोग और समर्थन से सीएसआईआर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक ऐसे संस्थान के रूप में जाना जाता है, जो राष्ट्रीय महत्त्व के विषयों को दरकिनार न करते हुए वैश्विक उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए तीव्र गति से अग्रसर है। भारत में यह ऐसी संस्कृति को परिलक्षित करता है, जो प्रौद्योगिकी और औद्योगिक निर्माण द्वारा विज्ञान को समाज के साथ जोड़ता है। दूरदृष्टि तथा मूल्य संपन्न लोगों ने सीएसआईआर को दिशा प्रदान कर सीएसआईआर को वर्तमान शक्ति, मूल्य एवं संस्कृतिवान् बनाया।

संपूर्ण भारत में मौजूदगी के चलते सीएसआईआर का 37 राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, 39 दूरस्थ केन्द्रों, 3 नवोन्मेनषी काम्प्लैक्स और 6 यूनिटों का सक्रिय नेटवर्क है। सीएसआईआर की अनुसंधान एवं विकास विशेषज्ञता तथा अनुभव इसके लगभग 4600 सक्रिय वैज्ञानिकों में समाहित है, जिन्हें लगभग 8000 वैज्ञानिक एवं तकनीकी कार्मिकों की सहायता एवं समर्थन प्राप्त है।

मिशन

''ऐसा वैज्ञानिक औद्योगिक अनुसंधान एवं विकास उपलब्ध कराना, जिससे भारत की जनता को अधिकतम आर्थिक, पर्यावरणीय और सामाजिक लाभ होते हों''।

देश की बौद्धिक संपदा का सबसे सुदृढ़ दावेदार सीएसआईआर आपीआर पूंजी में बढ़ोतरी करते हुए परम्परागत ज्ञानाधार की सुरक्षा में अग्रणी भूमिका का निर्वाह कर रहा है। सीएसआईआर को

विकासशील देशों के पीसीटी आवेदकों की सूची में पहला स्थान प्राप्त है। सीएसआईआर ने विज्ञान में उत्कृष्टता में संवर्धन करना भी जारी रखा है तथा यह एकमात्र ऐसा विज्ञान एवं तकनीकी निकाय है, जिसने वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए मानव संसाधन पर अनेक योजनाओं द्वारा 16 से 65 वर्ष की आयु वर्ग में मानव प्रौद्योगिकी का पोषण एवं सहयोग प्रदान किया।

सीएसआईआर रेडियो और अंतरिक्ष, भौतिकी, महासागर विज्ञान, भू-भौतिकी, रसायन, औषध, जीनोमिकी, जैवप्रौद्योगिकी और नैनोप्रौद्योगिकी से खनन, वैमानिकी, उपकरणन, पर्यावरणीय इंजीनियरी तथा सूचना प्रौद्योगिकी तक के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के व्यापक विषयों व क्षेत्रों में कार्य कर रहा है। यह सामाजिक प्रयासों से जुड़े अनेक क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण प्रौद्योगिकीय समाधान उपलब्ध कराता है, जिसमें पर्यावरण, स्वास्थ्य, पेयजल, खाद्य, आवास, ऊर्जा एवं कृषि क्षेत्र शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय मानव संसाधन विकास में सीएसआईआर की भूमिका उल्लेखनीय है।

भारत के बौद्धिक संपदा आंदोलन का पथ प्रदर्शक सीएसआईआर वर्तमान में प्रौद्योगिकी के चयनित क्षेत्रों में देश को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नेतृत्व दिलवाने के लिए अपने पेटेंट पोर्टफोलियो को सुदृढ़ कर रहा है। सीएसआईआर को किसी भी भारतीय सार्वजनिक वित्तपोषित अनुसंधान एवं विकास संगठन को स्वीकृत अमरीकी पेटेंटों के 90 प्रतिशत पेटेंट स्वीकृत किए गए हैं। यह प्रतिवर्ष औसतन लगभग 200 भारतीय पेटेंट और 250 विदेशी पेटेंट फाइल करता है। परिषद् के लगभग 9 प्रतिशत पेटेंटों को लाइसेंस प्राप्त हैं। यह संख्या वैश्विक औसत से अधिक है। विश्व में सार्वजनिक रूप से वित्तपोषित अपने पीयर अनुसंधान संगठनों में सीएसआईआर पेटेंट फाइल और अर्जित करने में सबसे आगे है।

सीएसआईआर ने विज्ञान और उन्नत ज्ञान के क्षेत्रों में अग्रणी कार्य किया है। इसका वैज्ञानिक स्टाफ भारत की वैज्ञानिक जनशक्ति का लगभग 3-4 प्रतिशत है किंतु भारत के वैज्ञानिक निर्गत में उनका योगदान 11 प्रतिशत है।

सुलभ एवं सस्ती स्वास्थ्य सुरक्षा के क्षेत्र में सीएसआईआर द्वारा प्रारंभ ओपन सोर्स ड्रग डिस्कवरी (ओएसडीडी) कार्यक्रम नवोन्मेष का एक नया मंच बन कर उभरा है। आर्थिक पिरामिड के सबसे निचले पायदान पर स्थित लोगों की जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय अंतराक्षेप हेतु परिषद् ने सीएसआईआर 800 नामक उच्चाकांक्षी कार्यक्रम की शुरूआत की है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य कड़े श्रम को कम करना और भारतीय जनता के आर्थिक उत्थान में योगदान देना है। राष्ट्रीय नवोन्मेष परिषद् (एनआईएनसी) के साथ भागीदारी करते हुए

सीएसआईआर ने एमएसएमइ की उत्पादकता में वृद्धि करने हेतु सामूहिक नवोन्मेषष पर ध्यान केन्द्रित किया है। सीएसआईआर वर्तमान में 6 समूहों में कार्य कर रहा है, जिसमें पीतल का सामान (ब्रासवेयर), खाद्य प्रसंस्करण, बाँस, ऑटो घटक, आयुष और जीवविज्ञान शामिल हैं। इन समूहों की संख्या बढ़ा कर 60 की जाएगी। सीएसआईआर के पास देश की सर्वोत्तम सुपर कम्प्यूटिंग सुविधा मौजूद है और यह डेटा तथा कम्प्यूटित इंटेसिव वैज्ञानिक शोधार्थ पेटास्केमल हाई परफार्मेंस कम्प्यूटिंग इन्वायरन्मेंट (पीएचपीसीई) की स्थापना कर रहा है।

सीएसआईआर ने आयुष के साथ सहयोग करते हुए परंपरागत ज्ञान डिजिटल लाइब्रेरी (टीकेडीएल) की संकल्पना तैयार की है और इसकी स्थापना की है जो कि देश के अद्वितीय संसाधन के रूप में उभरी है। टीकेडीएल में आयुर्वेद, यूनानी, सिद्धा से संबंधित 2.5 लाख चिकित्सीय सूत्रों हेतु सूचना 34 मिलियन पृष्ठों में और पाँच अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं में दी गई है। सीएसआईआर ने अनेक अंतर्राष्ट्रीय पेटेंट कार्यालयों के साथ टीकेडीएल ऐक्सेस (नान-डिस्किलोसर) समझौते किए हैं इनमें यूरोपियन पेटेंट ऑफिस (ईपीओ), यूनाइटेड स्टेमट पेटेंट एंड ट्रेडमार्क ऑफिस (यूएसपीटीओ), जापान पेटेंट ऑफिस (जेपीओ), इंटेलैक्चुअल प्रापर्टी ऑस्ट्रेलिया, कनेडियन इंटेलैक्चुअल प्रॉपर्टी ऑफिस (सीआईपीओ) आदि शामिल हैं। टीकेडीएल के माध्यम से भारत ने ईपीओ, यूएसपीटीओ, सीआईपीओ, यूकेपीटीओ, आईपी ऑस्ट्रेलिया में 100 से अधिक पेटेंट आवेदनों को नि:शुल्क रद्द करने/वापस लेने में सफलता हासिल की है। जबकि पूर्व में भारत को हल्दी के घाव भरने के गुणों और नीम की फंफूदरोधी विशेषताओं के संबंध में यूएसपीटीओ और ईपीओ में पेटेंटों को अवैध घोषित करवाने में अनेक वर्षो तक महंगी और कठिन कानूनी लड़ाई लड़नी पड़ी थी। वर्ड इंटेलैक्चुअल प्रॉपर्टी आर्गेनाइजेशन (डबयू आईपीओ) ने अन्य देशों को टीकेडीएल को परंपरागत ज्ञान संरक्षण हेतु मॉडल के रूप में अपनाने की संस्तुति की है ।

सीएसआईआर ने वैज्ञानिक एवं नवोन्मेष अनुसंधान अकादमी (एसीएसआईआर) की स्थापना की है। यह अकादमी राष्ट्रीय महत्त्व का विश्व स्तरीय संस्थान बनने के लिए तैयार है। यह अकादमी प्राथमिक रूप से ऐसे क्षेत्रों में शोध करने और प्रशिक्षण प्रदान करने पर ध्यान केन्द्रित करेगी जो साधारणतया भारत के मौजूदा विश्वविद्यालयों द्वारा उपलब्ध नहीं कराए जाते। इस अकादमी का पाठ्यक्रम, अध्याापन कला और मूल्यांकन नवोन्मेषी होंगे तथा पराविषयी क्षेत्रों में अधिकतम गुणवत्ता वाले कार्मिकों के सृजन के लिए निदेशित होंगे। इस अकादमी के बोर्ड में अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वैज्ञानिकों को शामिल किया गया है। इस अकादमी ने एम.टेक (160) और पी.एचडी.(715) के लिए नए विद्यार्थियों को पंजीकृत किया है। इसके अतिरिक्त लगभग 769 अंतरविषयी पाठ्यक्रम तैयार किए

गए हैं और वर्तमान में 150 से अधिक पाठ्यक्रम उपलब्ध कराए जा रहे हैं।

सीएसआईआर ने उद्यमशीलता को प्रोत्साहन देने के लिए वांछित क्रियाविधि तैयार की है जिससे नए आर्थिक क्षेत्रों के विकास को नया आधार बनाते हुए मूल और बृहत् नवोन्मेषों के सृजन और वाणिज्यीकरण को प्रोत्साहन दिया जा सकेगा।

सीएसआईआर नवोन्मेष कॉम्प्लैक्स की स्थापना कर रहा है। इस श्रृंखला में पहले तीन कॉम्प्लैक्सों की स्थापना चेन्नै, कोलकाता और मुंबई में की जा रही है। ये कॉम्प्लैक्स उद्योग, अनुसंधान एवं विकास संस्थानों और विश्व विद्यालयों की भागीदारी में ट्रांसलेशनल अनुसंधान का प्रारंभ करने हेतु विश्व स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध कराएंगे। सीएसआईआर के नवोनमेष कॉम्प्लैक्सों "चुनौती प्रेरित नवोन्मेष रणनीति" अपनाएंगे। ऐसी रणनीति क्षेत्र विशिष्ट "उद्योग समूह चुनौतियों" के आधार पर बनाई जाएगी। अपने प्रचालन के क्षेत्र में प्रत्येक नवोन्मेष कॉम्प्लैक्स अभिनिर्धारित क्षेत्रों में एमएसएमई को पोषित करेगा। अत: सरकार द्वारा घोषित नवोन्मेष के वर्तमान दशक में सीएसआईआर देश में नवोन्मेवष को गति प्रदान करने के लिए वांछित ढांचे तैयार करने में योगदान दे रहा है।

सीएसआईआर की घटक प्रयोगशालाएं, अग्रणी वैज्ञानिक क्षमताओं, प्रतिभा, जानकारी और बौद्धिक संपदा का गढ़ हैं। सीएसआईआर की नवोन्मेष क्षमता में और अधिक वृद्धि करने और बाजार में प्रक्रम, उत्पाद और सेवाएं लाने के लिए नए मॉडलों का दोहन करने के लिए सीएसआईआर टैक प्राइवेट लिमिटेड (सीटीपीएल) नामक स्वतंत्र कंपनी की स्थापना की गई है। सीटीपीएल उपयुक्त स्पिन-आउट अवसरों का पता लगाकर उनका और अधिक विकास कर तथा तत्पश्चात स्टार्ट-अप एंटरप्राइसेज के रूप में उन्हें स्पिन कर सीएसआईआर की प्रौद्योगिकियों और बौद्धिक संपदा को वाणिज्यीकृत करने के लिए सीएसआईआर की प्रयोगशालाओं के साथ नजदीकी से कार्य करेगी। सीएसआईआर-टैक का लक्ष्य तीव्र गति से प्रौद्योगिकी के वाणिज्यीकरण और उद्यमशीलता हेतु निजी निवेशों और उद्यम संबंधी ऊर्जा का लाभ उठाना है।

सीएसआईआर ने सीएसआईआर/80 : दूरदर्शिता एवं रणनीति 2022-नवीन भारत के लिए नवीन सीएसआईआर तैयार किया है। सीएसआईआर का मिशन है "नवीन भारत के लिए नवीन सीएसआईआर का निर्माण करना" और सीएसआईआर का विजन है "ऐसा विज्ञान करना जो वैश्विक प्रभाव के लिए प्रयास करे, ऐसी प्रौद्योगिकी तैयार करना जो नवोन्मेष आधारित उद्योग को सक्षम बनाए और पराविषयी नेतृत्व को पोषित करे जिसके द्वारा भारत की जनता के लिए समावेशी आर्थिक

विकास को उत्प्रेरित किया जा सके"।

जी. एन. रामचंद्रन प्रोटीन केन्द्र : एक अद्वितीय नवीन सुविधा

सीएसआईआर-इमटैक में स्थापित जी. एन. रामचंद्रन प्रोटीन केन्द्र भारत में अपनी तरह की एकमात्र सुविधा है। यह पूर्णतया प्रोटीनों की समेकित गतिविधियों के विविध रूपों पर केन्द्रित है और इसमें प्रोटीनों के मूल बिल्डिंग Cy, Dld (सुपरा मॉलिक्यूरलर असैम्बेलियों हेतु अमीनों अम्ल) का इस्तेमाल करते हुए अनुसंधान एवं विकास में शामिल समूह मौजूद हैं। प्रोटीनों के कार्यकरण को बेहतर ढंग से समझने के लिए इन-सिलिको तथा प्रयोगात्मक विज्ञान अनुसंधान भी किया जा रहा है। इस अद्वितीय प्रोटीन केन्द्र में मूल अनुसंधान से प्राप्त परिणामों को सामाजिक कल्याण के अनुप्रयोगों में तबदील करने के लिए आवश्यक सभी प्रकार के साधन मौजूद हैं।

ओएसडीडी कैमिस्ट्री आउटरीच प्रोग्राम (सीएसआईआर-सीडीआरआई पहल)

सीएसआईआर ने रसायन शास्त्र के अंतर्राष्ट्रीय वर्ष को चिह्नित करने के लिए कैमिस्ट्री आउटरीच प्रोग्राम की शुरुआत की है। इस कार्यक्रम से देश के विश्वविद्यालयों/संस्थानों के एम.एस.सी. तथा पीएच.डी. के विद्यार्थियों के लिए ओपन कैमिस्ट्री का सृजन करने में सहायता मिलेगी। इस प्रकार बड़ी संख्या में कार्बनिक यौगिकों को संश्लिष्ट किया जाएगा, सीएसआईआर के ओपन सोर्स ड्रग डिस्कसवरी (ओएसडीडी) कार्यक्रम के तहत विभिन्न् संक्रामक रोगों के विरुद्ध उनकी जांच की जाएगी ।

भविष्य में निम्नवत हेतु प्रयास करने की परिकल्पना की गई है:

1. आर्गेनिक कैमिस्ट्री में विशेषज्ञता प्राप्त कर रहे एम.एसएस.के विद्यार्थियों को बड़ी संख्या में व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करना ;
2. विभिन्न विश्वविद्यालयों, आइआइटी, आइआइएसइआर और अन्य शैक्षणिक संस्थानों को शामिल करना ;

सीएसआईआर–केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन : एक परिचय

भूमिका

सीएसआईआर–केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआईआर–सीएसआइओ) वैज्ञानिक और औद्योगिक उपकरणों की परिकल्पना, अनुसंधान एवं विकास में समर्पित एक प्रमुख राष्ट्रीय प्रयोगशाला है। यह देश का एक प्रमुख बहु–विषयी एवं बहु–क्षेत्रीय औद्योगिक अनुसंधान एवं विकास निकाय वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् (सीएसआईआर), भारत की चण्डीगढ़ स्थित एक प्रमुख घटक प्रयोगशाला है। सीएसआइओ अत्यधुनिक अनुसंधान एवं विकास अवसंरचनाओं, वैज्ञानिक एवं तकनीकी जनशक्ति की टीम से युक्त एक बहु–विषयी अनुसंधान संगठन है, जो कृषि–उपकरणविन्यास, जैव–प्रौद्योगिकी इंजीनियरिंग, ऑप्टिक्स आधारित कॉकपिट डिस्प्ले प्रणालियां, फाइबर ऑप्टिक्स आधारित संवेदी एवं उपस्कर आदि पर अनुसंधान कार्य कर रहा है।

सीएसआईआर–सीएसआइओ की स्थापना वर्ष 1959 में परम्परागत प्रौद्योगिकियों एवं अन्य वैज्ञानिक व तकनीकी सहयोग से विकास कार्य कर देश में स्वदेशी उपकरण उद्योग के विकास को गति प्रदान करने के उद्देश्य से की गई। इसके उपरांत उपकरण प्रौद्योगिकीविदों की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए वर्ष 1963 में स्विस फाउंडेशन फॉर टैक्निकल अस्स्टिेंस, ज्युरिख, स्विटज़रलैंड के सहयोग से इण्डो–स्विस प्रशिक्षण केन्द्र (आइएसटीसी) की स्थापना की गई।

अधिदेश

- वैज्ञानिक एवं औद्यागिक उपकरणों, संघटकों एवं प्रणालियों की परिकल्पना, अनुसंधान एवं विकास
- उपकरणों/संघटकों की सर्विस, अनुरक्षण, परीक्षण एवं अंशांकन
- उपकरण विन्यास के क्षेत्र में मानव संसाधन विकास
- भारतीय उद्योग को तकनीकी सहायता

क्रियाकलाप के प्रमुख क्षेत्र

- निम्नलिखित के लिए वैज्ञानिक एवं औद्योगिक उपकरणों की परिकल्पना, अनुसंधान एवं विकास
  - **सामाजिक :** कृषि आधारित एवं स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्रौद्योगिकीय विकास के माध्यम से वैज्ञानिक उपकरणों के निर्माण में संवर्धन
  - **सामरिक उपकरण विन्यास :** जहाँ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रौद्योगिकी से वंचित किया गया - हेड अप डिस्प्ले प्रणालियां, प्राक्षेपिकी मापन, विस्फोटकों की पहचान
  - **उच्च विज्ञान :** स्तरीय प्रकाशन

- मानव संसाधन विकास तथा वैज्ञानिक एवं तकनीकी सेवाएं
  - इण्डो-स्विस प्रशिक्षण केन्द्र (आइएसटीसी)
  - वैज्ञानिक एवं नवाचार अनुसंधान अकादमी (एसीएसआईआर)
  - लघु कार्यक्रम (विदेश मंत्रालय, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग)
  - चिकित्सा उपकरणों का अंशांकन

प्रमुख अनुसंधान एवं विकास क्रियाकलाप

कृषि उपकरणविन्यास के क्षेत्र में प्रमुख अनुसंधान एवं विकास मृदा एवं पादप स्वास्थ्य निगरानी, पूर्व एवं पश्च-कृषि प्रक्रियाओं, कृषि-उत्पादों का गुणवत्ता मूल्यांकन एवं भंडारण समाधानों का विकास करना है।

जैव-चिकित्सा उपकरणविन्यास का प्रमुख लक्ष्य रोग निदान, उपचार, रोगियों एवं वृद्ध व्यक्तियों

के लिए प्रॉस्थेटिक एवं सहायक उपस्करों का विकास करना है। इस संबंध में विशेष उदाहरण हैं : एनेस्थीसिया वर्कस्टेशन, कोहनी से ऊपर भाग के लिए प्रॉस्थेसिस, इलेक्ट्रॉनिक घुटना, बैच कैमिस्ट्री एनालाइज़र, रोबोटिक सर्जरी, सुविज्ञ रोगी देखभाल वाहन, पैथोजन की पहचान के लिए जैव-संवेदी आदि।

भारत सरकार के 'जय विज्ञान' कार्यक्रम के अंतर्गत संगठन ने समीर, मुंबई के सहयोग से कैंसर के उपचार के लिए 6 एमवी मेडिकल लीनियर एक्सीलिरेटर (लाइनैक) का सफल विकास किया। 6 एमवी लाइनैक की दो इकाइयाँ महात्मा गांधी चिकित्सा विज्ञान संस्थान, वर्धा और कैंसर संस्थान, अडयार, चेन्नै में स्थापित की गई हैं और इनसे रोगियों का उपचार किया जा रहा है।

ऑप्टिकल उपकरण विन्यास के क्षेत्र में 'हेड-अप-डिस्प्ले' (हड) प्रौद्योगिकी सक्षम कुछ देशों की श्रेणी में सम्मिलित हो संगठन ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान स्थापित की है। हड हल्के लड़ाकु विमान (एलसीए) के कॉकपिट में पायलट के सामने स्थापित किया जाने वाला एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है, जो पायलट को विमान की दिशा, उड़ान तथा शस्त्रों संबंधी आंकड़े ठीक उसके सामने प्रदर्शित करता है। इससे पायलट बिना अपनी गर्दन घुमाए बाह्य दृश्यों के साथ-साथ उड़ान संबंधी सभी आंकड़े अपने सामने देख पाता है।सीएसआईआर-सीएसआइओ में विकसित ऑप्टो-मैकाट्रॉनिक्स हड प्रणाली का सफल व्यावसायीकरण किया जा चुका है और अब तक इसकी 2200 सफल उड़ानें हो चुकी हैं। एलसीए के लिए हड के विकास की सफलता से संगठन को हिन्दुस्तान जैट ट्रेनर (एचजेटी-36) और तेजस-नौसेना वायुयानों के लिए हड विकसित करने का कार्य मिला।

फोटोनिक्स संवेदी विभिन्न अनुप्रयोगों, विशेषकर जहाँ कठोर एवं जोखिमपूर्ण वातावरण हो, परम्परागत संवेदियों की तुलना में अपनी स्वाभाविक विशेषताओं के कारण उपयोगी हैं। इन एफबीजी तथा एलपीजी जैसे विशेषीकृत संवेदियों की परिकल्पना, निर्माण एवं परीक्षण औद्योगिक वातावरण, कृषि, जैव-संवेदी एवं रासायनिक संवेदी आदि अनुप्रयोगों के लिए किया गया। इन संवेदियों का परीक्षण पॉवर ट्रांसफॉर्मर में हॉट स्पॉट पहचान, -170 डिग्री सी. तक क्रायो तापमान मापन, खिलाड़ियों के लिए माउथ गार्ड पर प्रभाव अध्ययन तथा अवसंरचनाओं की स्वास्थ्य निगरानी के उद्देश्य से तनन संवेदन के लिए किया गया। इन क्रियाकलापों के अतिरिक्त प्रोजैक्टाइल विलोसिटी मापन तथा लघु शस्त्रों एवं असले की उच्च गति की फोटोग्राफी के लिए डीआरडीओ-टीबीआरएल

के सहयोग से डेटोनिक्स हेतु फोटोनिक्स उपकरणों का विकास किया गया। ये प्रणालियां बुलेटप्रूफ हेलमेट एवं जैकेटों के परीक्षण में सहायक होंगी।

भू-वैज्ञानिक उपकरणविन्यास के क्षेत्र में संगठन गत दो दशकों से भूस्खलन, हिम एवं अवधाव, भूकंपीय, रेलवे और अन्य भू-तकनीकी अनुप्रयोगों के क्षेत्र में अनुसंधान, परिकल्पना एवं विकास कार्य कर रहा है। इस क्षेत्र में अनेक संवेदी एवं उपकरण विकसित कर प्रयोगकर्ता संस्थानों जैसे आइएमडी, नई दिल्ली; सासे, चण्डीगढ़; आरडीएसओ, लखनऊ को प्रदान किए गए तथा वे अपने अनुसंधान कार्य में इनका प्रयोग कर रहे हैं। सीएसआईआर-सीएसआइओ में चण्डीगढ़ एवं आसपास के क्षेत्रों की भूकंपीय घटनाओं की निगरानी के लिए एक भूकंपीय वेधशाला चौबीसों घंटे कार्यरत है। इससे प्राप्त आंकड़े वाडिया इंस्टिट्यूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी, देहरादून; आइएमडी, नई दिल्ली तथा डीएसटी, नई दिल्ली से राष्ट्रीय भूकंपीय डाटाबेस के लिए सांझे किए जा रहे हैं।

जैव-आण्विक इलेक्ट्रॉनिकी एवं नैनोप्रौद्योगिकी में संगठन डीएनए प्रोटीन, निदान एवं उपस्कर अनुप्रयोगों के लिए आण्विक मोटरों जैसे विविध उपलब्ध पदार्थों के अन्वेषण कार्य पर केन्द्रित रहा। संगठन में कार्बन नैनोट्यूब्स को जैवअणुओं के साथ सहयोजित कर स्वास्थ्य रक्षा में अनुप्रयोग करने पर कार्य किया गया।

मानव संसाधन विकास

अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप अनुसंधान एवं विकास कार्य के साथ-साथ, सीएसआईआर-सीएसआइओ कई शैक्षिक कार्यक्रम भी संचालित करता है, जिनमें शामिल हैं :

1) इण्डो-स्विस प्रशिक्षण केन्द्र के डिप्लोमा कोर्स;
2) एडवांस्ड इंस्ट्रूयुमेंन्टेशन इंजीनियरिंग में एम.टैक. कार्यक्रम;
3) इंजीनियरिंग में पीएच.डी. कार्यक्रम;
4) विज्ञान में पीएच.डी. कार्यक्रम।

सीएसआईआर-सीएसआइओ का दिल्ली केन्द्र नियमित तौर पर विदेश मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रायोजित जैव-चिकित्सा, ऑप्टिकल/ऑप्थेल्मिक एवं विश्लेषणात्मक उपकरणों के प्रचालन, अनुरक्षण एवं मरम्मत पर प्रबंध विकास कार्यक्रम संचालित करता है।

सीएसआईआर-सीएसआइओ के नई दिल्ली और चेन्नै स्थित सेवा एवं अनुरक्षण केन्द्र विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी), नई दिल्ली द्वारा वित्तपोषित जैव-चिकित्सा उपकरणों की मरम्मत एवं अनुरक्षण पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करते हैं।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी सेवाएं

सेवा एवं अनुरक्षण केन्द्र, नई दिल्ली में स्थापित राष्ट्रीय अंशांकन सुविधा के माध्यम से उपभोक्ताओं को चिकित्सा उपकरणों के परीक्षण एवं अंशांकन की सेवाएं उपलब्ध करवाई जा रही हैं। सेवा एवं अनुरक्षण केन्द्र, चेन्नै उपकरणों के अंशांकन के अतिरिक्त विभिन्न प्रयोक्ताओं के लिए ऊर्जा अध्ययन कार्य करता है।

भावी कार्यक्रम

संगठन द्वारा 12वीं पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत निम्नलिखित सीएसआईआर निधिप्रदत्त कार्यक्रम प्रारंभ किए गए हैं :

- ऑप्टो-मैकाट्रॉनिक्स टैक्नोलॉजीस फॉर नैक्स्ट जैनरेशन सेंसर्स एंड एप्लिकेशन्स (ओमेगा)
- एडवांस इस्ट्रूयुमैन्टेशन सॉल्युशन्स फॉर हैल्थ केयर एंड एग्रो-बेस्ड एप्लिकेशन्स (आशा)

सीएसआईआर-सीएसआइओ अनेक नैटवर्क परियोजनाओं में प्रतिभागी प्रयोगशाला रही है। साथ ही, संगठन में अनेक बाह्य वित्तपोषित परियोजनाओं पर भी कार्य चल रहा है।

संपर्क :

निदेशक
सीएसआईआर-केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन
सैक्टर- 30 सी, चण्डीगढ़ - 160030
दूरभाष : 0172-2657190, 2657265
ई. मेल : director@csio.res.in
वैबसाइट : www.csio.res.in

सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान : एक परिचय

सूक्ष्मजीव जीवन की सबसे छोटी स्वतंत्र इकाई हैं, ये हमारे चारों ओर, वायु में, जल में थल पर हर जगह मौजूद हैं । ये हमारे शरीर की सतह पर है और शरीर के अंदर भी विद्यमान है । इमटैक में यही सूक्ष्मजीव हमारे अध्ययन का केन्द्र हैं । हम पर्यावरण में इन सूक्ष्मजीवों की विभिन्न किस्मों की जाँच करते हैं तथा इनके विकास एवं पर्यावरण पर इनके प्रभाव का अध्ययन करते है । यह भी कि वह किस प्रकार हमारे शरीर में विकसित होते हैं और हमें प्रभावित करते हैं । इसके अतिरिक्त हम इन सूक्ष्मजीवों का प्रयोग महत्वपूर्ण जैव रसायनों एवं जैव अणुओं के उत्पादन के लिए भी करते हैं । हमारे बहुत से शोध दल इस बात का भी अध्ययन कर रहे हैं कि यह सूक्ष्मजीव आण्विक स्तर पर कैसे कार्य करते हैं और किस प्रकार मानव कल्याण, स्वास्थ्य एवं पर्यावरण हेतु उनका दोहन किया जा सकता है ।

वर्ष 1984 में स्थापित, सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक) वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् (सीएसआईआर) की 38 राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं में सबसे नवीनतम प्रयोगशाला है जो कि जैव प्रौद्यगिकी के क्षेत्र में अग्रणी है । यह संस्थान लगभग 47 एकड़ के क्षेत्र में फैला हुआ है जिसमें प्रयोगशालाएँ और आवासीय परिसर शामिल है । इस संस्थान की मुख्य परिसंपत्ति 50 से अधिक उत्साही एवं अभिप्रेरित युवा वैज्ञानिकों का दल है, जिनमें से अधिकतर के पास पीएचडी उपाधि व विश्व-विख्यात प्रयोगशालाओं में कई वर्षों का शोध प्रशिक्षण है । 250 के करीब उच्च प्रशिक्षित तकनीशियनों और शोध छात्रों द्वारा समर्थित, ये वैज्ञानिक आधारभूत (बेसिक) एवं व्यावहारिक (एप्लाइड) अनुसंधान में लगे हुए है ।

अनुसंधान क्षेत्र – जैवरासायनिक अभियांत्रिकी, किण्वन (फर्मेंटेशन) व डाउनस्ट्रीम प्रोसेसिंग; एंज़ाइमी गतिविधियों हेतु सूक्ष्मजीवों की जांच ; एंटीबायटिक संश्लेषण के मध्यवर्तियों का संशोधन य एंजाइमों का उत्पादन, शुद्धिकरण एवं अध्ययन ; सूक्ष्मजीव संवृद्धि एवं किण्वन का गणितीय मॉडलिंग।

कोशिका जीवविज्ञान एवं प्रतिरक्षण – संक्रामक रोगों से प्रतिरक्षा ; अंतरकोशिकीय संक्रमण को नियंत्रित करने में एंटीजैनिक एवं मॉलिक्यूलर टार्गेट्स ; माइक्रोबैक्टीरियल पैथोजेनेसिस में साइटोकाईन्स एवं उनका कार्य ; टी एच 1 एवं टी एच 2 कोशिकाओं का प्रतिजनों (एंटीजेन प्रेज़ैंटिंग सैल) द्वारा नियंत्रण ; कोशिकाओं की गतिशीलता एवं रूपांतरण में साइटोस्कलेटन की भूमिका ।

सूक्ष्मजीव अनुवांशिकी एवं जैव आणविक जीव विज्ञान – सूक्ष्मजीवी पॉलिसाइकलिक एरोमेटिक हाइड्रोकार्बन डिग्रेडेशन की इंजीनियरिंग ; सूक्ष्मजैवी अल्काइन गैसीय मैटाबॉलिक पाथवेज़ की इंजीनियरिंग ; सूक्ष्मजैवी जैवसतहकों का बायोसर्फेक्टेंट उत्पादनय यीस्ट में ऑस्मोरेगुलेशन का जेनेटिक नियंत्रण; सूक्ष्मजीव विविधता, वर्गीकरण एवं फाइलोगैमी व यीस्ट में थर्मोटॉलरेंस एवं इथानोल टॉलरेंस में सुधार ; अतिसूक्ष्म यीस्ट म्यूटेंट फीनोटाइप का पता लगाना व कॉलरा रोगजनकता की जैव आणविक क्रियाविधि ; आंत्र संबंधित बैक्टीरिया एवं प्रोटोज़ुआ के बीच संबंध की क्रियाविधि ; जीवित कॉलरा टीके का विकास, माइकोबैक्टीरिया में बहुऔषधि प्रतिरोधन ; माइकोबैक्टीरियल प्रोटीनों का संभावित औषध लक्ष्यों के रूप में विकास ; आनुवांशिक तौर पर तैयार यीस्ट में औषध स्क्रीनिंग एवं औषध को विषक्तता रहित करना ; स्ट्रोप्टोमाइसिस में एंटीबायोटिक उत्पादन के लिए आनुवांशिक परिवर्तन ; संकर एंटीबायोटिक्स का निर्माण एवं बैक्टीरियोफेज़ का आणविक अध्ययन ; टी.बी. का सेरोडायग्नोसिस ; जीन एक्सप्रेशन में क्रोमोटिन पुनर्निर्माण ; बैक्टीरियल हीमोग्लोबिन एवं सैल मैटाबॉलिज्म ।

प्रोटीन विज्ञान तथा अभियांत्रिकी – रिकम्बिनेन्ट/इंजिनियरड प्रोटीनों की क्लोनिंग तथा उत्पादन ; थ्राम्बोलिसिस की एंजाइमी प्रक्रिया ; एक्स-रे क्रिस्टैलोग्राफी द्वारा प्रोटीन संरचना निश्चयन ; सिग्नल

ट्रांस्डक्शन की आणविक प्रक्रिया; एक्सट्रीमोफाइल्स के प्रोटीनों का ताप – स्थिरीकरण (थर्मल स्टेबेलाइज़ेशन) । पॉलीपेप्टाइड बैकबोन की दिशा व्युत्क्रम का उसकी संरचना पर प्रभाव का अध्ययन, प्रोटीन सम्मुचयन का अध्ययन, प्रोटीनों के वलन एवं अवलन का अध्ययन, संश्लेषत पेप्टाइड़ों की आकृति का अध्ययन, फिशन यीस्ट में प्रोटीन उत्पादन तंत्र का विकास ।

अनुसंधान सुविधाएँ

किण्वन (फर्मेन्टेशन) – अनवरत एवं बैच किण्वन (फर्मेंटेशन) के लिए 2 से 1500 लीटर तक की क्षमता के प्रयोगशाला-स्तर से उत्पादन-स्तर के फर्मेंटर्स, उच्च क्षमता के होमोजिनाइज़र्स, अपकेन्द्र पृथक्कारक (सैन्ट्रीफ्यूगल सेपरेटर्स), परानिस्यन्दन (अल्ट्रा फिल्ट्रेशन), रोटरी वैक्यूम फिल्टर, स्प्रे ड्रायर; बड़े पैमाने पर डाउन स्ट्रीम प्रसंस्करण उपकरण ।

उत्तक एवं कोशिका संवर्धन (टिशू व सैल कल्चर)– बहुत सी स्वतंत्र इकाइयों की सुविधा जिनमें लेमिनार फ्लो हुड, कार्बनडाईआक्साइड उष्मायंत्र, लिक्विड नाइट्रोजन भंडारण सुविधाएँ, अपगामी एवं अधोगामी माइक्रोस्कोप जिसमें फोटोग्राफी एवं फलोरोसेंस सुविधा है (फ्लोरोसेंस एक्टिवेटिड सैल सॉर्टिंग) और लगभग 100 भिन्न प्रकार की कोशिका श्रेणियों के स्टॉक शामिल है।

सूक्ष्मजीव प्ररूप संवर्धन संग्रह (एमटीसीसी) – सूक्ष्मजीवों के रखरखाव, परिरक्षण एवं पहचान की सुविधा, इस संग्रह में जीवाणु एवं कवक के 10000 से अधिक कल्चर हैं और इसे अब अंतरराष्ट्रीय न्यासी प्राधिकरण (आई डी ए) के रूप में मान्यता प्राप्त है । एमटीसीसी द्वारा शैक्षिक एवं शोध प्रयोजन के लिए प्रमाणिक सूक्ष्मजीव कल्चरों की आपूर्ति की जाती है ।

पशु गृह – प्रयोगों के लिए पशुओं की सुविधा जो कि प्रतिरक्षण संबंधी शोध हेतु उच्च स्तर के अन्त:प्रजात चूहों की नस्लों के साथ-साथ खरगोश एवं हैमस्टर भी प्रदान करता हैं ।

जैव सूचना एवं जैव कम्प्यूटिंग – यह केन्द्र डिजिटल वर्कस्टेशन/सिलिकॉन ग्राफिक्स/सन/आइबीएम/ 145 एमबीपीएस लीज़ड लाइन, परिसरीय नेटवर्किंग, मॉलीक्यूलर मॉडलिंग हेतु सॉफटवेयरों से युक्त है तथा सभी प्रयोगशालाओं में इंटरनेट की सुविधा उपलब्ध है ।

प्रोटीन एवं डीएनए विश्लेषण – स्वचालित प्रोटीन सीक्वेंसर, अमीनो एसिड एनॉलाइज़र, स्वचालित पेप्टाइड सिंथेसाइज़र एवं हस्तचालित सोल्यूशन फेज़ सिंथेसिस, एच पी एल सी ; एफ पी एल सी, माइक्रोबोर एवं उत्पादन स्तर की प्रोटीन शुद्धिकरण प्रणाली, स्वचालित डी एन ए सीक्वेंसेस, लिक्विड सिकंटिलेशन काउंटस, पल्स-फील्ड एवं अन्य जैल इलैक्ट्रोफोरेसिस, थर्मल साइकलस, रीयल टाईम पी सी आर, डी एन ए इलैक्ट्रोपोरेटर्स, माल्डी-टॉफ, क्यू-ट्रैप मास स्पैक्ट्रोमीटर्स, प्रोटीन स्पॉट पिकिंग वर्कस्टेशन, डी एन ए माइक्रोएरे-विश्लेषक, जैल स्कैनिंग, इमेजिंग एवं फॉस्फोइमेजर, सी डी, फलोरोसेंस, यू वी/विज़िबल एब्ज़ार्प्शन, एफ टी आइ आर एवं एन एम आर स्पैक्ट्रोफोटोमीटर्स, कैपिलरी इलैक्ट्रोफोरेसिस, डॉयनामिक लाइट स्कैट्रिंग, नैनोसेकेंड फ्लोरीमीटर, डिफरेंशियल स्कैनिंग एवं आइसोथर्मल फिल्ट्रेशन कैलोरीमीटर्ज़ । **सूक्ष्मदर्शी** – प्रकाश सूक्ष्मदर्शी, कॉनफोकल सूक्ष्मदर्शी, स्कैनिंग इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी (एस इ एम) एवं ट्रांस्मिशन इलैक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी (टी इ एम) । **अन्य सुविधाएँ** – बायाकोर एफिनिटी एनॉलाइज़र, अटॉमिक एबर्साप्शन स्पैक्ट्रोमीटर, एक्स-रे क्रिस्टैलोग्राफी: एक्स-रे जेनरेटर, इमेज प्लेट एवं सूक्ष्मदर्शी । **पुस्तकालय** – संस्थान के शोध क्षेत्रों से संबंधित, 160 से अधिक आवधिक पत्रिकाएँ; 6400 से अधिक संदर्भ पुस्तकें एवं गद्य पुस्तकें; कागज़ एवं माइक्रोफिल्म रूप में पत्रिकाओं के पुराने अंक; माइक्रोफिल्म पढ़ने की सुविधाएँ । **बौद्धिक संपदा प्रबंधन** – अत्याधुनिक सुविधाओं युक्त पेटेन्ट डेटाबेस, जैसे – एस टी एन, साइफाइंडर, डेल्फिअन, डर्वेन्ट एवं माइक्रोपेटेन्ट ।

इमटैक की राष्ट्रीय सुविधाएँ :

- जैवरासायनिक अभियांत्रिक अनुसंधान एवं प्रक्रिया विकास केन्द्र
- सूक्ष्मजीव प्ररूप संग्रह एवं जीन बैंक जिसे अंतरराष्ट्रीय न्यासी प्राधिकरण की मान्यता प्राप्त है।
- प्रोटीन अभियांत्रिकी (इंजीनियरिंग) पर जैव सूचना केन्द्र ।

लाईसेंसकृत नवीन एवं संशोधित प्रक्रियाएँ/प्रौद्योगिकियाँ

- उर्जा दक्ष एल्काहोल प्रौद्योगिकी ।
- प्राकृतिक रिकम्बीनेंट एवं थक्का विशिष्ट (क्लॉट स्पेसिफिक) स्ट्रेप्टोकाइनेस ।
- रिकम्बीनेंट स्टैफाइलोकाइनेज़ ।
- अल्फा एमाइलेज़, यूरोकाइनेज़ एवं अल्कालाइन प्रोटीएज़ ।

संस्थान के पीएचडी कार्यक्रम के तहत विद्यार्थियों को बायोटैक्नॉलॉजी के विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण भी दिया जाता है । कंसलटेंसी सुविधा तथा विभिन्न सुविधाएँ कांट्रैक्ट पर प्रयोग के लिए उपलब्ध हैं ।

संपर्क :

निदेशक
सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक)
(वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद्)
सैक्टर 39ए, चण्डीगढ़- 160036ए भारत
दूरभाष :+91-172-6665201 / 6665202
ई.मेल : director@imtech.res.in
वैबसाइट : http://www.imtech.res.in

सूक्ष्मजीवों का संसार

सूक्ष्मजीव प्ररूप संवर्धन संग्रह एवं जीन बैंक

Microbial Type Culture Collection and gene bank (MTCC)

एक अंतर्राष्ट्रीय न्यासी प्राधिकरण (IDA)

जैव विविधता (माइक्रोबियल डाइवर्सिटी) मानव के लिए हमेशा से ही उत्सुकता का विषय रही है । जैव विविधता का सरल भाषा में अर्थ है किसी भौगोलिक क्षेत्र में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के जीवों की संख्या । पशुओं एवं पौधों की जैव विविधता का गूढ़ अध्ययन किया गया है क्योंकि वे देखे जा सकते हैं परन्तु सूक्ष्मजीव क्योंकि आंखों से नहीं देखे जा सकते इसलिए अभी भी उनके बारे में अधिक जानकारी नही हो पाई है । अभी तक विश्व की कुल सूक्ष्मजीवी विविधता का केवल 1-5% हिस्सा ही खोजा गया है । भारत में भी कुछ क्षेत्र जैव विविधता के हॉटस्पॉट के रूप में जाने जाते है जैसेकि पूर्वी घाट एवं हिमालय । इस लेख में हम विशेष रूप से सूक्ष्मजीवों के बारे में बात करेंगे ।

सूक्ष्मजीव जैसेकि (बैक्टीरिया, फंगस, खमीर) पारिस्थितिकी तंत्र (ecosystem) का एक अहम हिस्सा है (चित्र 1) । सूक्ष्मजीवों की उत्पत्ति पृथ्वी पर सबसे पहले हुई व सूक्ष्मजीवों ने ही पृथ्वी के वातावरण को बाकी जीवों की उत्पत्ति के लिए अनुकूल बनाया । सूक्ष्मजीव सर्वव्यापी हैं तथा अत्यधिक ठंडे वातावरण से लेकर गरम पानी के झरनों तक पाये जाते हैं । सूक्ष्मजीव विविधता का विज्ञान के कुछ क्षेत्रों में अहम योगदान है जैसेकि चिकित्सा, औद्योगिक अनुसंधान एवं कृषि अनुसंधान । सूक्ष्मजीव हमारी दिनचर्या का अहम हिस्सा हैं । ब्रेड, पनीर, दही एवं मदिरा का निर्माण सूक्ष्मजीवों के बिना असंभव है । सूक्ष्मजीवों से बनी एंटिबायोटिक दवाओं ने लाखों लोगों की जान बचाई है। अतः सूक्ष्मजीव विविधता का संरक्षण अति अनिवार्य है । विश्व सूक्ष्मजीवी डाटा सेंटर (WDCM) के अनुसार तकरीबन 17 लाख से अधिक सूक्ष्मजीवी कल्चर विभिन्न कल्चर संग्रहणों में संरक्षित है । सूक्ष्मजीव विविधता के संरक्षण के लिए भारत सरकार द्वारा एक अहम कदम उठाया गया है – *एमटीसीसी* ।

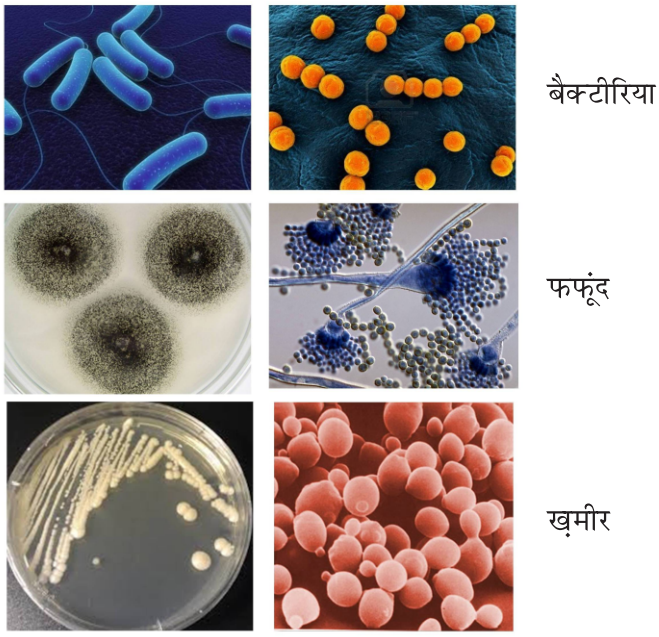

चित्र 1: सूक्ष्मजीव (बैक्टीरिया, फंगस, खमीर)

सूक्ष्मजीव प्ररुप संवर्धन संग्रह एवं जीन बैंक (MTCC) :

सूक्ष्मजीव प्ररुप संवर्धन संग्रह एवं जीन बैंक (MTCC) 1986 में स्थापित एक राष्ट्रीय सुविधा है जो भारतीय जैव प्रौद्योगिकी विभाग (DBT) और वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् (CSIR), द्वारा संयुक्त रुप से वित्त पोषित है। *एमटीसीसी* चंडीगढ़ में स्थित सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक) का प्रमुख घटक है। ये सुविधा सूक्ष्मजीव संग्रहण हेतु जीव संग्रहण विश्व महासंघ (WFCC) का एक सहयोगी सदस्य है और विश्व सूक्ष्मजीवी डाटा सेंटर (WDCM) के साथ पंजीकृत है।

एमटसीसी के निम्नलिखित मुख्य उद्देश्य हैं :

1 सूक्ष्मजीवी कल्चर की आपूर्ति / वितरण (Supply)
2 सूक्ष्मजीवी कल्चर की पहचान (Identification)
3 सूक्ष्मजीवी कल्चर संरक्षण (long-term preservation and deposit)

4. *एमटीसीसी* : एक अंतर्राष्ट्रीय न्यासी प्राधिकरण (IDA)

5. माइक्रोबियल विविधता, वर्गीकरण और जीनोमिक्स पर अनुसंधान गतिविधियाँ (research activities on microbial diversity, taxonomy, phylogeny and related areas in microbiology)

1) सूक्ष्मजीवी कल्चर की आपूर्ति / वितरण (Supply) :

एमटीसीसी देश के कई हज़ार शोधकर्ताओं को सूक्ष्मजीव विज्ञान से संबंधित उत्कृष्ट सेवाएं प्रदान करने में आगे रहा है। *एमटीसीसी* के ग्राहक (तकरीबन 8,200) डेटाबेस में एक दूरस्थ स्थान के कॉलेज से लेकर देश की सर्वोच्च बायोटेक / दवा कंपनियां शामिल हैं। विभिन्न राज्यों और देश के केंद्र शासित प्रदेशों से इन सेवाओं का उपयोग करने वाले शोधकर्ताओं की संख्या का आंकड़ा चित्र-2 में दिखाया गया हैं। देश के अधिकांश अनुसंधान संगठन, शैक्षिक संस्थान, दवा निर्मता, जैव प्रौद्योगिकी संस्थान, सूक्ष्मजीव विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी संबंधी काम में शामिल खाद्य कंपनियां माइक्रोबियल कल्चरो के लिए *एमटीसीसी* पर निर्भर है। पिछले पांच वर्षों के दौरान *एमटीसीसी* बत्तीस हज़ार से अधिक माइक्रोबियल कल्चरों की आपूर्ति कर चुका है।

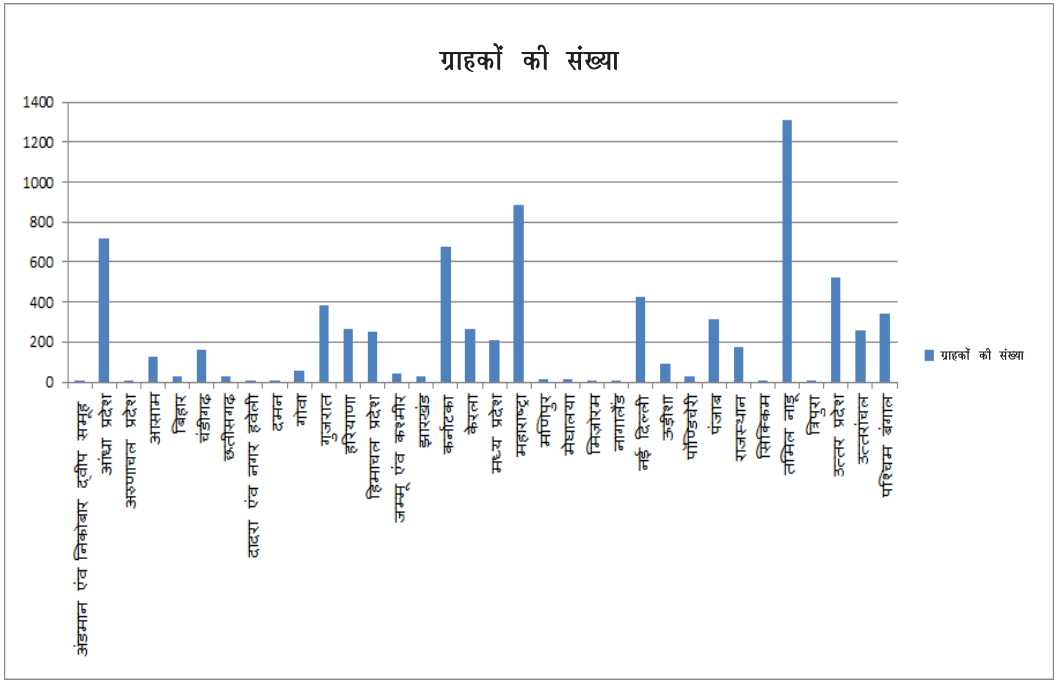

चित्र 2: विभिन्न राज्यों से *एमटसीसी* सेवाओं का उपयोग करने वाले शोधकर्ताओं की संख्या

2) सूक्ष्मजीवी कल्चर की पहचान (Identification) :

प्रामाणिक माइक्रोबियल कलचरो की आपूर्ति के अलावा, *एमटीसीसी* माइक्रोबियल कल्चरो की पहचान, उनके फैटी एसिड मिथाइल एस्टर विश्लेषण (FAME) एवं उनके लक्षणवर्णन (characterization) आदि में भी शोधकर्ताओं की मदद करता है। *एमटीसीसी* प्ररूपी लक्षणवर्णन और जीन अनुक्रम (gene sequence) आधारित वर्णन से सूक्ष्म जीवाणुओं की पहचान के लिए कई अनुरोध प्राप्त करता है। पिछले पांच वर्षों के दौरान लगभग 2500 माइक्रोबियल कल्चरों की पहचान प्ररूपी लक्षणवर्णन, जीन अनुक्रमण और फैटी एसिड मिथाइल एस्टर विश्लेषण के तरीकों के आधार पर की गई।

3) सूक्ष्मजीवी कल्चर संरक्षण (Preservation) :

एमटसीसी, राष्ट्रीय जैव विविधता प्राधिकरण (NBA) भारत, द्वारा माइक्रोबियल कल्चरो के लिए मनोनीत राष्ट्रीय भंडार (DNR) है। पिछले 25 वर्षों से प्रतिरुप-मानक सूक्ष्मजीव संग्रहण एवं जीन बैंक (MTCC) ने खुद को भारत में सूक्ष्म जैविक संसाधनों के लिए एक अनूठे संग्रह के रूप मे स्थापित किया है। *एमटीसीसी* देश की माइक्रोबियल विविधता का संरक्षण कर रहा है। वर्तमान में *एमटीसीसी* के 5 खण्ड है (एक्टीनोमायसीटिस, बैक्टीरिया, फंगस, खमीर, प्लाज्मिड) और सामूहिक रुप से *एमटसीसी* संग्रह में 25,000 से अधिक माइक्रोबियल कल्चर संरक्षित है, जिनमें से 10000 कल्चर सार्वजनिक वितरण के लिए उपलब्ध है (चित्र 3)।

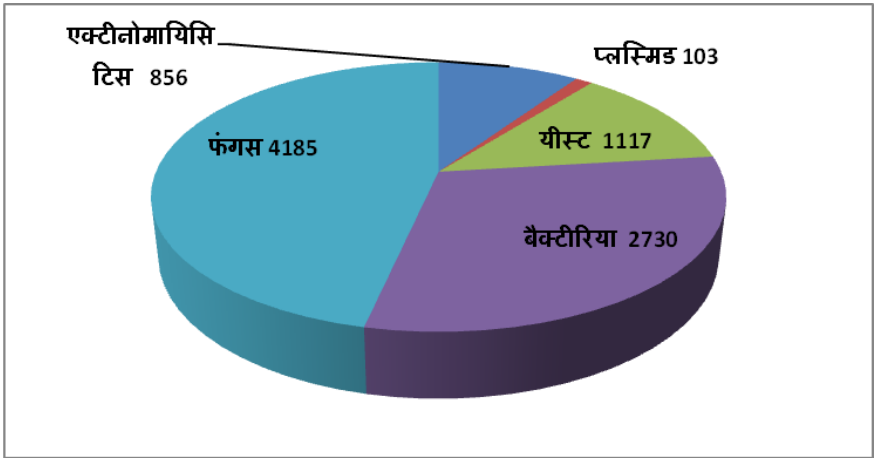

चित्र 3 सार्वजनिक वितरण के लिए उपलब्ध माइक्रोबियल कल्चर

सभी कल्चरो को दीर्घकालिक संरक्षण के तीन तरीकों से संरक्षित किया जाता है: तरल नाइट्रोजन भंडारण (चित्र 4), -70°C फ्रीजर (चित्र 5) एवं हिमशुष्किकरण (चित्र 6)। फंगस कल्चर खनिज तेल के अंतर्गत भी संरक्षित किये जा रहे हैं। जीवक्षमता (viability) और जीवों के कुछ प्रमुख गुणों की समय-समय पर जाँच की जाती हैं।

चित्र 4: तरल नाइट्रोजन भंडारण सुविधा

चित्र 5: -70°C फ्रीजर

चित्र 6: हिमशुष्किकरण सुविधा

मनोनीत राष्ट्रीय भंडार (DNR) होने कि वजह से *एमटसीसी* शोधकर्ताओं से सामान्य निक्षेप के लिए भारत भर से कई माइक्रोबियल कल्चर प्राप्त करता है। सही रुप से पहचान किये गये माइक्रोबियल कल्चर उनके प्रासंगिक डेटा के साथ *एमटीसीसी* को भेजे जाते हैं जिनकी *एमटीसीसी*, के कर्मचारी फिर से जांच करते है। जो कलचर निश्चित मानदंडों को पूरा करते हैं, वे सामान्य निक्षेप के लिए स्वीकार किए जाते हैं।

4) एमटीसीसी (MTCC) : एक अंतर्राष्ट्रीय न्यासी प्राधिकरण (IDA)

4 अक्टूबर 2002 के दिन *एमटीसीसी* को एक अंतर्राष्ट्रीय न्यासी प्राधिकरण (IDA) के रुप में विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (WIPO), जिनेवा, स्विट्जरलैंड द्वारा मान्यता दी गई, जिसके साथ यह भारत का पहला आईडीए बन गया है। *एमटसीसी* पेटेंट उद्देश्य के लिए कल्चर संरक्षित करने के लिए अधिकृत है।

एमटसीसी दो तरह के गोपनीय निक्षेप करता है :

1) सुरक्षित निक्षेप - गोपनीय निक्षेप उन कल्चरो के लिये जिनके पेटेंट संरक्षण की मांग नहीं की गई है,

2) बुडापेस्ट संधि के तहत निक्षेप – यह, भारत सहित सभी पीसीटी देशों में पेटेंट दाखिल करने के लिए मान्य है। *एमटीसीसी* नियमित रूप से सुरक्षित, भारतीय पेटेंट निक्षेप और बुडापेस्ट संधि

निक्षेप करने के लिए माइक्रोबियल कल्चर प्राप्त करता है। *एमटसीसी* औसतन हर साल सुरक्षित / बुडापेस्ट संधि के तहत जमा करने के लिए 60 माइक्रोबियल कल्चर प्राप्त करता है। पिछले साल के दौरान, *एमटीसीसी* ने 100 से अधिक कल्चर बुडापेस्ट संधि के तहत जमा किये है, वर्तमान में *एमटीसीसी*, पेटेंट संग्रह में 775 से अधिक माइक्रोबियल कल्चर हैं, और उनमें से 1/3 औद्योगिक इकाइयों से हैं। बुडापेस्ट संधि निक्षेप के तहत कुछ आसपास के देशों से भी *एमटीसीसी* अनुरोध प्राप्त करता है। सरकार द्वारा समर्थित एक कल्चर संग्रह होने की वजह से *एमटीसीसी* सेवाओं के लिए नाममात्र शुल्क लेता है।

5) माइक्रोबियल विविधता, वर्गीकरण और जीनोमिक्स पर अनुसंधान गतिविधियाँ:-

सेवा घटकों के अलावा, *एमटीसीसी* के वैज्ञानिक माइक्रोबियल विविधता, माइक्रोबियल वर्गीकरण और पर्यावरण जैव प्रौद्योगिकी आदि से संबंधित अनुसंधान गतिविधियों में भी सक्रिय रहते हैं। नयी प्रजातियों का वर्णन करने वाले कुछ शोध पत्र भी *एमटीसीसी* के वैज्ञानिकों ने प्रकाशित किये हैं। पिछले दशक के दौरान, *एमटीसीसी* वैज्ञानिकों ने भारत के विभिन्न पारिस्थितिक आलों से 70 नयी माइक्रोबियल प्रजातियों का लक्षण वर्णन किया है। भारत के विभिन्न पारिस्थितिक आलों से खोजी गयी नयी प्रजातियों का विवरण नीचे दिये गये चित्र 7 में दिखाया गया है।

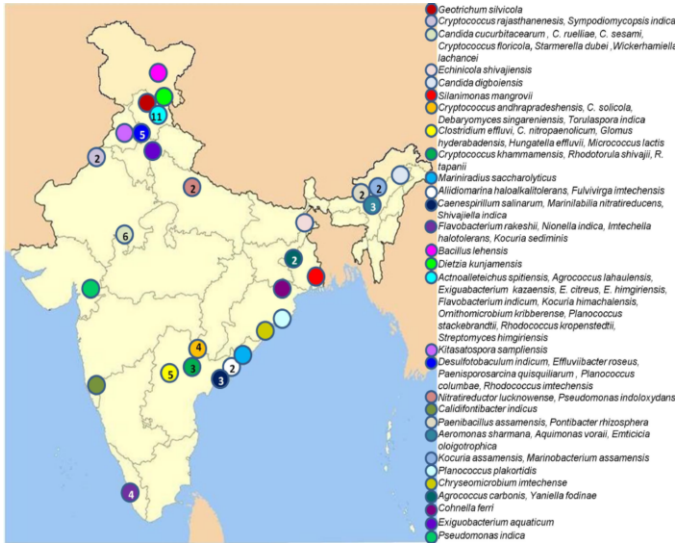

चित्र 7: *एमटीसीसी* द्वारा भारत के विभिन्न पारिस्थितिक आलों से खोजी गयी नयी माइक्रोबियल प्रजातियों की संख्या

एमटीसीसी वेबसाइट :

एमटीसीसी, भारत के विभिन्न स्थानों से एकत्र कल्चरों का डाटा रखता है जिसकी पूरी जानकारी *एमटीसीसी*, वेबसाइट http://mtcc.imtech.res.in पर उपलब्ध है । 10,000 कल्चर, जो सार्वजनिक वितरण के लिए उपलब्ध हैं, उन कल्चरो के बारे में सारी जानकारी वेबसाइट http://mtcc.imtech.res.in/catalogue.php. पर उपलब्ध है । इस संग्रह में कई टक्सा (taxa) के प्रकार उपभेद, शिक्षण उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले कल्चर, आनुवंशिक स्टॉक, विभिन्न गुणवत्ता नियंत्रण के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले कल्चर इत्यादि शामिल हैं। *एमटीसीसी*, सामान्य संग्रह का 80% से अधिक हिस्सा भारत के विभिन्न पारिस्थितिक आलों (ecological niches) से एकत्रित भारतीय मूल का हैं । इसके अलावा तकरीबन 14,000 महत्वपूर्ण माइक्रोबियल कल्चर भी विभिन्न अनुसंधान परियोजनाओं के तहत *एमटीसीसी*, द्वारा संरक्षित किये गये हैं । *एमटीसीसी*, कर्मचारियों द्वारा किए गए अन्वेषण एवं शोध के फलस्वरूप, नियमित रुप से *एमटीसीसी*, संग्रह में नये कल्चर शामिल किये जा रहे हैं। *एमटीसीसी*, की वेबसाइट संरक्षित उपभेदों के बारे में प्रासंगिक जानकारी, आसान खोज, विश्लेषण और पुनः प्राप्ति के लिए कम्प्यूटरीकृत हैं।

संकलन : गुंजन शर्मा, सुमित मित्तल एवं जी. एस. प्रसाद
सीएसआईआर–सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक), चण्डीगढ़

किण्वन : एक अनवरत यात्रा (फर्मेन्टेशन)

3 सितम्बर 1928 को अलग्ज़ेडर फ़्लैमिंग (Alexander Fleming) के एक आकस्मिक प्रयोग से ऐसे यौगिक पदार्थ का पता चला जो मानव सभ्यता के लिए वरदान साबित हुआ । इस जीवन रक्षक पदार्थ को पेन्सलीन (Penicillin) का नाम दिया गया । द्वितीय विश्व युद्ध (1939-1945) में घायल सैनिकों के उपचार हेतू ब्रिटेन और अमेरिका के संयुक्त प्रयासों से पेन्सीलीन (Penicillin) की उत्पादन प्रक्रिया के साथ ही किण्वन प्रौद्योगिकी (Fermentation Technology) के नए युग का सूत्रपात हुआ।

किण्वन जीव विज्ञान प्रणाली की सबसे अद्‌भुत और पुरानी प्रक्रिया में से एक है । फरमेंटेशन (Fermentation) शब्द की उत्पति लेटिन शब्द fervere से हुई जिसका अर्थ झाग के साथ उबलना है। आम भाषा में अगर कहा जाए तो फरमेंटेशन एक ऐसी प्रणाली है जहाँ सूक्ष्म जीवों के प्रयोग से वांछित उत्पादों की प्राप्ति की जाती है । आदिकाल से मनुष्य किण्वन प्रौद्योगिकी का उपयोग जाने अनजाने करता आया है । ऐसे साक्ष्य मिले हैं जिससे ये प्रमाणित होता है कि ईसा से 6000 वर्ष पूर्व भी मनुष्य किण्वन प्रक्रिया से शराब और ब्रेड का निर्माण करता था । चीनी सभ्यता में भी ईसा से 3000 वर्ष पूर्व किण्वित सोयाबीन का प्रयोग चर्म रोगों के लिए किया जाता था । लेकिन ये सारी तकनीकें वैज्ञानिक तथ्यों से परे अनुभव पर आधारित थी । लेकिन सही मायनों में फ्रांस के प्रसिद्ध वैज्ञानिक लुई पाश्चर ने 1857 में किण्वन के वैज्ञानिक सिद्धांतों को दुनिया के सम्मुख प्रस्तुत किया ।

लुई पाश्चर ने यह भी दिखाया कि दूध का किण्वन कुछ सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा होता है और यदि इन जीवाणुओं को नष्ट कर दिया जाए तो किण्वन संभव नहीं है । अत: उसने निष्कर्ष निकाला कि किण्वन ऐसी प्रक्रिया है जो जीवाणुओं पर निर्भर होती है । 1897 में लुई पाश्चर की मृत्यु के दो साल बाद बुकनर ने पहली बार यीस्ट कोषों से उत्पन्न किण्वक (Enzyme) से शर्करा को विघटित करने में सफलता प्राप्त की । इसके बाद अनेक वैज्ञानिकों जैसे हार्डेन तथा यंग, रोबिन्सन, न्यूबर्ग, मेयरहाफ आदि ने किण्वन संबंधी अनेक शोध किए ।

प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान कुछ ऐसे रसायनों की आवश्यकता पड़ी जिसे उस वक्त पारंपरिक तरीके से तैयार नहीं किया जा सकता था । उदाहरणत: ग्लिसरोल (glycerol) गोला बारूद में प्रयोग होने

वाला एक महत्वपूर्ण पदार्थ था । लेकिन वनस्पति तेलों के आयात के बंद होने से ग्लिसरोल का उत्पादन भी प्रभावित हो रहा था । ऐसे में जर्मन जीव रसायनज्ञों और अभियंताओं ने यीस्ट किण्वन (yeast fermentation) की मदद से शर्करा (glucose) को विघटित कर बड़े पैमाने पर (करीब 100 टन/महीने) ग्लिसरोल उत्पादन करने में सफलता प्राप्त की ।

अनेक सफर तय करके आज किण्वन प्रौद्योगिकी उस मुकाम पर पहुँची हैं जहाँ कम खर्च में अधिक दक्षता और अधिक शुद्ध अवस्था में दवाओं, कृषि खाद्य एवं अन्य महत्वपूर्ण औद्योगिक उत्पादों का उत्पादन संभव है ।

किण्वन : एक यात्रा

6000 वर्ष ईसा पूर्व	शराब एवं मदिरा बनाने में किण्वन प्रौद्योगिकी का उपयोग, ब्रेड का उत्पादन
3000 वर्ष ईसा पूर्व	किण्वित सोयाबीन का प्रयोग रोगों के उपचार हेतु
सन् 1674	लियुवेनहॉक द्वारा सूक्ष्मदर्शी का निर्माण
सन् 1840	श्वान की थ्यौरी - जीवधारियों का परिणाम है किण्वन
सन् 1854	लुई पाश्चर - किण्वन यीस्ट द्वारा होता है
सन् 1897	एडवर्ड बुकनर - किण्वन द्वारा शर्करा का एल्कोहल में परिवर्तन
प्रथम विश्व युद्ध (सन् 1915 से 1917)	किण्वन द्वारा ग्लिसरोल का औद्योगिक उत्पादन
सन् 1928	(Alexander Fleming – pencillin) अलेग्जंडर फलैमिंग द्वारा पैन्सलीन की खोज
सन् 1944	बृहत पैमाने पर किण्वन द्वारा पैन्सलीन का उत्पादन
वर्तमान	आज किण्वन प्रौद्योगिकी का उपयोग विभिन्न औद्योगिक रसायन, धातु, दवाईयाँ, मादक पेय, कृषि, खाद्य पदार्थो, जैव ईंधन आदि क्षेत्रों में व्यापक रूप से हो रहा है ।

किण्वन प्रौद्योगिकी के उपयोग

किण्वन प्रौद्योगिकी के प्रयोग से अल्प मूल्य एवं सुलभ वस्तुओं का उपयोग करके अधिक मूल्यवान तथा उपयोगी पदार्थों का निर्माण किया जाता है । आज किण्वन प्रौद्योगिकी का प्रयोग बहुत बडे पैमाने पर हो रहा है एवं इसका बाजार तेजी से विस्तार कर रहा है । किण्वन प्रौद्योगिकी के कुछ उपयोग:

1. **घरेलू उपयोग** - हमारे समाज में आदिकाल से ही विभिन्न प्रकार के व्यजंनों एवं खाद्य पदार्थ बनाने के लिए किण्वन का प्रयोग होता रहा है । जैसे दही जमाना, इडली, पनीर बनाना इत्यादि । विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों के संरक्षण के लिए भी इस विधि का प्रयोग होता रहा है ।

2. **औषध** - एंटिबायोटिक, विभिन्न रोगों के लिए टीके आदि का निर्माण आज बडे पैमाने पर किण्वन प्रौद्योगिकी के द्वारा किया जा रहा है । बीसवीं शताब्दी में पेंसीलीन के अविष्कार से औषध क्षेत्र का कायापलट हो गया । अनुसंधानकर्ता नित नए सूक्ष्मजीवों की पहचान कर विभिन्न उपचारात्मक औषधियों के निर्माण में प्रयत्नशील है । अगर कहा जाए कि सूक्ष्मजीव विभिन्न नवीन उत्पादों के असीमित स्रोत है तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी ।

3. **कृषि** - पशु आहार, जैविक खाद और जैविक कीटनाशक के उत्पादन में इस प्रणाली का प्रयोग किया जाता है ।

4. **ईंधन** - इथायल अल्कोहल का उत्पादन किण्वन की बड़ी सफलताओं में से एक है। इथायल अल्कोहल (10%) और गैसोलीन (90%) का मिश्रण एक आदर्श ईंधन का काम करता है । कृषि एवं नगर निगम के कूड़े के किण्वन से इथानाल की प्राप्ति की जा सकती है । अपूर्य पदार्थों को नवीकरणीय बनाया जा सकता है ।

5. **अपशिष्ट जल संसाधन** - इस प्रक्रिया से शुद्ध जल की प्राप्ति की जा सकती है । इस विधि में वायुजीवी जीवाणु का प्रयोग करके ठोस करकट को कार्बन डाई-आक्साइड, पानी एवं खनिज लवणों में तोड़ा जा सकता है ।

किण्वन के लिए अपेक्षित परिस्थितियाँ

उपयुक्त सूक्ष्म जीव का चयन – सर्वप्रथम उस सूक्ष्म जीव की पहचान करनी होती है जो वांछित उत्पाद का उत्पादन करने में सक्षम हो । सूक्ष्मजीव को उसके प्राकृतिक स्थान से अलग करके प्रयोगशाला में उसकी कार्य क्षमता को जाँचने के लिए विभिन्न प्रयोग किए जाते हैं । अधिक उत्पादन के लिए विभिन्न जैव प्रौद्योगिकी तकनीकों का सहारा भी लिया जाता है ।

सूक्ष्म जीवों के लिए भोजन – सूक्ष्मजीवों के लिए पोषक (*मीडिया*) की आवश्यकता पड़ती है जिसे आसुत जल में घोल कर बनाया जाता है । यह मुख्यत: कार्बन (ग्लूकोज, लेक्टोज इत्यादि) एवं नाइट्रोजन (प्रोटीन, यूरिया इत्यादि) के स्रोत होते हैं । इन पदार्थों के साथ ही कुछ गौण तत्वों की भी आवश्यकता पडती है । जैसे कैल्शियम, फॉस्फेट इत्यादि । सूक्ष्मजीवों का भोजन प्राकृतिक या कृत्रिम हो सकता है । अक्सर औद्योगिक उत्पादन में कृषिजन्य पदार्थों एवं उद्योगों से प्राप्त उपजातों का प्रयोग किया जाता है जैसे संतरा, गन्ने की खोई (Bagasse), विभिन्न तेलों की खली । अक्सर ऐसे पदार्थ सस्ते पड़ते हैं और वांछित उत्पादों की कीमत नियंत्रण रखने में सहायक होते हैं ।

किण्वपात्र (Fermenter) – किसी उत्पाद को तैयार करने के लिए शोध प्रयोगशाला में होते हैं लेकिन बड़े पैमाने पर उसके उत्पादन के लिए विशेष उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है । किण्वनपात्र एक प्रकार का जैव रिएक्टर होता है जिसको वायु, ताप पी एच, वातन जैसे मापदण्डों को नियंत्रित किया जाता है और सूक्ष्मजीवों को वृद्धि के लिए अनुकूल वातावरण मिलता है । सर्वप्रथम मीडिया को किण्वनपात्र में अर्धविनिवृत (sterilized) किया जाता है । अनुकूल ताप पर किण्वन प्रारंभ करने के लिए जीवित जीवाणु (अंत:क्राम – inoculum) छोड़े जाते हैं ।

प्रयोगशाला स्तर के किण्वपात्र

उत्पाद प्राप्ति - उत्पाद प्राप्ति की प्रक्रिया को अधोप्रक्रमण (downstream processing) कहा जाता है। किण्वन प्रक्रिया समाप्त हो जाने के पश्चात उत्पाद का पृथ्थकरण एक बड़ी चुनौती होता है, अगर उत्पाद का निर्माण मीडिया में होता है तो उपकेन्द्रित (centrifugation) एवं निस्पन्दन (filtration) जैसी तकनीकों से इसे अलग किया जाता है । कुछ सूक्ष्मजीव कोशिकाओं के भीतर वांछित उत्पादन करते हैं । ऐसे उत्पाद को प्राप्त करने के लिए विशेष उपकरणों से कोशिकाओं को तोड़ कर उत्पाद की प्राप्ति की जाती है। ये सभी प्रक्रियाएं काफी जटिल होती है और उत्पाद प्राप्ति में इस बात का खास ध्यान रखा जाता है कि उत्पाद का नुकसान कम से कम हो।

अधोप्रकमण प्रसंस्करण उपकरण

भारतवर्ष में किण्वन प्रौद्योगिकी का विस्तार एवं संभावनाएँ

विगत कुछ वर्षो से सम्पूर्ण विश्व में जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई है और भारत भी इस क्षेत्र में एक बडी शक्ति बनकर उभरा है । हाल ही में ABLE (ASSOCIATION OF BIOTEC LED ENTERPRISE) ने 'भारत को किण्वन आधारित उद्योगो के लिए वैज्ञानिक केन्द्र बनाना' विषय पर एक श्वेत पत्र भारत सरकार को सौंपा है । आज पूरे विश्व में जैव औषध (Biopharma) के क्षेत्र में निर्माण क्षमता का अभाव चल रहा है और भारत कम कीमतों, उच्च गुणवत्ता एवं निपुण, कुशल तकनीकी शक्ति से इस क्षेत्र मे अगुवाई कर सकता है । आज बड़ी संख्या में उपचारिक जैव प्रौद्योगिकीय औषध और टीके हैं जिनका देश में उत्पादन और विधटन किया जा रहा है । पुनर्योगज तकनीक की मदद से कई दवाईयों के उत्पादनों को बढ़ाया गया है और इसी तरह तकनीकी विकास जितना ज्यादा होता जायेगा किण्वन की मदद से उत्पादों (दवाईयाँ, संरक्षित भोजन इत्यादि) की

उपलब्धता को बढ़ाया जा सकेगा । आजकल जहाँ स्टेम कोशिकाओं के द्वारा उपचार का विस्तार हो रहा है तो इस विधि के बड़े स्तर पर उत्पादन और रख रखाव में किण्वन प्रौद्योगिकी अहम् भूमिका अदा करेगी । आज वैज्ञानिक मानव संसाधन का विशाल भण्डार अर्थात् वैज्ञानिकों और अभियंताओं का एक बड़ा समूह इस क्षेत्र में अपनी सेवाएं प्रदान कर रहे हैं । किण्वन प्रौद्योगिकी के विभिन्न पक्षों पर कार्य करने के लिए आज अनेक राष्ट्रीय अनुसंधान प्रयोगशालाएँ, विश्वविद्यालय एवं अन्य वैज्ञानिक संस्थान इस दिशा में कार्यरत है ।

सीएसआईआर–इमटैक में किण्वन की सुविधा

1984 में स्थापित इमटैक सी.एस.आई.आर. की सबसे युवा प्रयोगशालाओं में से एक है । संस्थान में प्रशिक्षित वैज्ञानिकों एवं कुशल तकनीशियनों की सशक्त टीम है जो जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नत अनुसंधान में कार्यरत है । आज संस्थान द्वारा विकसित कई टैक्नोलोजी बाजार में उपलब्ध है । स्ट्रैप्टोकाइनेस (Streptokinase) का विशेष रूप से जिक्र किया जा सकता है । ये दवा पहले विदेश से आयात करनी पडती थी और इसकी कीमत काफी अधिक थी लेकिन इमटैक से विकसित स्वदेशी तकनीक से इस दवा के निर्माण से इसकी कीमतों में काफी कमी आई है । आज ये तकनीक सम्पूर्ण भारतवर्ष के लिए वरदान साबित हो रही है । इन सभी तकनीकों को उद्योग को स्थानांतरित करने में किण्वन विभाग का विशेष रूप से योगदान रहा है । इमटैक में किण्वन विभाग

बृहत उत्पादन के लिए किण्वपात्र

GLP प्रयोगशाला

को जैवरसायनिक अभियांत्रिकी अनुसंधान तथा प्रक्रिया विकास केन्द्र (BERPDC) के नाम से जाना जाता है । इस विभाग में निरन्तर और बैच किण्वन के लिए 2 से 1500 लीटर तक के अनेक आधुनिक किण्वपात्र उपलब्ध हैं साथ ही उच्च क्षमता के होमो-जिनाइजर (Homogeniser) केन्द्रप्रसारक विभाजक, अल्ट्रा निस्पन्दन जैसे अंधोप्रकमण प्रसंस्करण उपकरण है । किण्वन के लिये अनुकूल एव उत्तम वातावरण प्रदान करने के लिये विभाग में ऐसी प्रयोगशाला भी है जहाँ कुशल प्रयोगशाला कार्यप्रणाली (GLP- Good Laboratory Practice) जैसे गुणवत्ता के कठिन मापदण्डों का पालन किया जाता है । आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में किसी भी तकनीक को विकसित करने में किण्वन प्रौद्योगिकी का विशेष योगदान होता है। इमटैक का किण्वन विभाग संस्थान और राष्ट्र के विकास में निरंतर प्रयासरत है ।

संकलन : दिनेशकुमार, सृष्टि शिखा एवं जयदीप मेहता
सीएसआईआर-सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक), चण्डीगढ़

हृदयघात उपचार में स्ट्रेप्टोकाइनेज़ की नई बुनियादें

पिछले कुछेक दशकों से हमारे देश में आधुनिकीकरण एवं पश्चिमीकरण की एक लहर सी चल पड़ी है जिसके परिणामस्वरूप हमारी दिनचर्या, खान-पान की आदतें एवं जीवन शैली में विलासिता का समावेश हो गया है । हम औद्योगीकरण के विलासित जीवन के इस मार्ग को अपनाकर मधुमेह, हृदयघात (हार्ट-अटैक), मस्तिष्कघात (ब्रेन स्ट्रोक) सबंधी विकारों को अपने शरीर में समाहित करने की ओर अग्रसर हो रहे हैं। पिछले कुछ दशकों से विकसित देशों में हृदय रोगों से अनुमानत: 5.3 करोड़ से अधिक मौतें हुई है जबकि विकासशील देशों मे यह आंकड़ा 8 से 9 करोड़ को पार कर गया (अर्थात् 70 प्रतिशत से भी अधिक) ।

भारत में जनवरी 2013 में हुए एक अध्ययन के प्राथमिक परिणामों से पता चला है कि शहरी एवं ग्रामीण, दोनों क्षेत्रों में, हृदय की बीमारियों से अधिकतर जानें जाती हैं । हालांकि मृत्युदर के निश्चित कारणों का पता लगाया जाना अभी बाकी है । शोध आंकड़ों के अनुसार, आयु वर्ग 25-69 मे लगभग 25 प्रतिशत मौतें हृदय रोगों से होती हैं । यह आंकड़े ग्रामीण क्षेत्रों के अनुपात में शहरी क्षेत्रों में बढ़ जाते हैं और पुरुषों के साथ-साथ महिलाओं में भी मृत्युदर का प्रमुख कारण हृदय रोग ही हैं । क्षेत्र विशेष आकलन के स्वरूप से यह पाया गया कि हृदय रोगों की संख्या मध्य क्षेत्रों में न्यूनतम-12 प्रतिशत है इसके विपरीत यही अनुपात में दक्षिण भारत में यह सर्वाधिक (25 प्रतिशत) है ।

रक्त संबंधी विकार जैसे कि हृदयघात (हार्ट अटैक), घनास्रता (थ्रोम्बोसिस) और घनास्र अंत: शल्यता (थ्रोम्बो-एम्बोलिज़्म) का मुख्य कारण रुधिर वाहक तंत्र में रक्त के थक्के के गठन के कारण अवरोध उत्पन्न होना हैं । हार्ट अटैक के प्रारंभिक लक्षणों की जाँच के आधार पर इनका उपचार स्ट्रेप्टोकाइनेज़ या अन्य प्लाज़्मिनोजन सक्रियकों द्वारा शुरू कर दिया जाता है। हार्ट अटैक के लक्ष्ण दिखाई देने पर प्रारंभ के दो घंटो में प्लाज़्मिनोजन सक्रियकों द्वारा किया जाने वाला उपचार अधिकांश जानों को बचा लेता है ।

रक्त के घटकों में थक्का जमाने वाले एवं थक्के को घोलने वाले दोनों घटक मौजूद होते हैं जिनके बीच एक परिष्कृत संतुलन सामान्य अवस्था में बना रहता है, किंतु चोट लगने के उपरांत थक्का जमाने वाले घटक अत्यधिक तीव्रता के साथ सक्रिय होकर थक्का बनाते हैं और शरीर से रक्त की हानि को रोकते हैं । सामान्य अवस्था में, रक्त का थक्का बनाने वाले प्रमुख घटक प्रौथ्रोम्बिन एवं

फाइब्रिनोजन क्रमशः निष्क्रिय एवं घुलनशील अवस्था में पाए जाते हैं किंतु थक्का बनने के समय में यह तत्व सक्रिय होकर क्रमशः थ्रोम्बिन एवं जालस्वरूप अघुलनशील फाइब्रिन में परिवर्तित हो जाते हैं और रक्त की हानि स्राव को रोकते हैं । अगर यही थक्का शरीर की धमनियों व शिराओं के अंदर बनता है तो ये थक्के के आस-पास के उत्तकों में भोजन व ऑक्सीजन के वितरण में कमी लाता है जिसके परिणामस्वरूप उत्तकों में स्थायी क्षति होना आरंभ हो जाती है और ये शरीरिक लकवे व मृत्यु का कारण बनता है ।

जिस तरह रक्त में थक्का जमाने वाले घटक मौजूद होते हैं ठीक इसके विपरीत थक्कों को तोड़ने या नष्ट करने या घोलने वाले प्रोटीन भी निष्क्रिय रूप से धमनियों व शिराओं में प्रवाहित होते रहते हैं। थक्कों के विघटन के लिए विशेष रूप से उत्तरदायी (निष्क्रिय अवस्था में) प्रोटीन प्लाज़्मिनोजन, उत्तक निर्मित प्लाज़्मिनोजन सक्रियक (टी.पी.ऐ.) एवं यूरोकाइनेज प्रमुख प्रकीण्व हैं । सक्रिय प्लाज़्मिनोजन एवं उत्तकों निर्मित प्लाज़्मिनोजन सक्रियक थक्के में उपस्थित फाइब्रिन जाल के कारण अधिक तीव्रता के साथ एकत्रित होते हैं और उत्तक निर्मित प्लाज़्मिनोजन सक्रियता के कारण प्लाज़्मिनोजन एक सक्रिय किण्वक, प्लाज़्मिन में परिवर्तित हो जाता हैं । प्लाज़्मिन तीव्रता के साथ रक्त के थक्के के मुख्य घटक, फाइब्रिन को छोटे- छोटे टुकड़ों में तोड़ देता है एवं रक्त प्रवाह को सामान्य बनाने में मदद करता है ।

शरीरिक प्लाज़्मिनोजन सक्रियकों का निर्माण शरीर में होता है परंतु वर्तमान समय में, औद्योगिक स्तर पर इन्हें कोशिकाओं को कल्चर कर इसका निर्माण किया जाता है ताकि हृदयघात की परिस्थितियों में इसका उपयोग किया जा सके । चूंकि कोशिकाओं का कल्चर अत्यधिक महँगी तकनीक है अतः इसका मूल्य 40,000 से 50,000 रुपए है । इतनी अधिक महँगी जेनेरिक दवाईयाँ आम आदमी की पहुँच के बाहर हैं । इसके विपरीत कुछ बैक्टीरिया के प्रोटीन जैसेकि स्ट्रेप्टोकाइनेज़ व स्टेफाइलोकाइनेज़ भी प्लाज़्मिनोजन को सक्रिय रूप, प्लाज़्मिन में बदलने की क्षमता रखते हैं तथा इनकी प्लाज़्मिन बनाने की क्षमता शरीर में पाए जाने वाले प्लाज़्मिनोजन सक्रियकों से कई गुना अधिक होती है । व्यापक पैमाने पर किए गए चिकित्सकीय प्रयोगों द्वारा यह स्पष्ट रूप से प्रमाणित होता है कि स्ट्रप्टोकाइनेज़ उतना ही प्रभावकारी है जितने कि tPA एवं uPA हैं । (ISIS-3, 1992) 1950 के दशक में अकस्मात् खोजे गए स्ट्रेप्टोकाइनेज़ का उत्पादन 1980-90 के दशकों में विदेशों में होता था तथा भारत इन दवाओं को आयात करता था । जिसके कारण इनका मूल्य 10,000 से 15,000 रुपए था। परंतु 1985-1990 के समय भारत के सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान, चण्डीगढ़ में स्ट्रेप्टोकाइनेज़ प्रोटीन पर कार्य शुरु हुआ ।

स्ट्रेप्टोकाइनेज़ का प्रारंभिक शोध-कार्य उसकी संरचना एवं क्रिया-विधि पर केन्द्रित था परंतु धीरे-धीरे इसका बड़े पैमाने पर निर्माण कर स्वदेशी तकनीक विकसित की गई और इसको औद्योगिक पैमाने पर प्रथम बार केडिला फार्मास्युटिकल को इमटैक की तरफ से स्वदेश में बनाने के लिए दिया गया । केडिला ने इमटैक द्वारा प्रदान की गई तकनीक के आधार पर 1990 के दशक में स्वदेश में निर्मित "प्राकृतिक स्ट्रेप्टोकाइनेज़" (चित्र-1) को भारतीय बाज़ार में उतारा । जिसके फलस्वरूप दवा का मूल्य कम हो गया तथा स्ट्रेप्टोकाइनेज़ कम दाम पर आम आदमी के लिए उपलब्ध हुई । इसके दूसरी तरफ सीएसआईआर की छोटी सी प्रयोगशाला, इमटैक, निरंतर रूप से स्ट्रेप्टोकाइनेज़ की क्रिया-विधि को समझने व इसकी उपयोगिता को सुधारने में प्रयासरत था । तकनीक की कड़ी को आगे बढ़ाते हुए इमटैक ने "रिकॉम्बिनेन्ट स्ट्रेप्टोकाइनेज़" (चित्र-2) को बनाया और इसके उत्पादन को कई गुना बढ़ाया । चूंकि अधिक उत्पादन किसी भी उद्योग की सफलता होती है, अत: इस तकनीक को व्यवसायिक स्तर पर "शासुन" नामक भारतीय कंपनी ने लिया तथा वर्ष 2006-07 में बाजार में उतारा ।

चित्र 1: सीएसआईआर-इमटैक द्वारा हस्तांतरित स्वदेशी "प्राकृतिक स्ट्रेप्टोकाइनेज़" जिसे केडिला फार्मास्युटिकल द्वारा पहली बार भारत में उतारा गया

चित्र 2: सीएसआईआर-इमटैक द्वारा हस्तांतरित "रिकॉम्बिनेन्ट स्ट्रेप्टोकाइनेज़" जिसे जैव प्रोद्यौगिकी द्वारा विकसित किया एवं स्ट्रेप्टोकाइनेज़ का उत्पादन कई गुना बढ़ाया।

"रिकॉम्बिनेन्ट स्ट्रेप्टोकाइनेज़" के बाजार में आ जाने से न केवल बाहर की कंपनियों का स्ट्रेप्टोकाइनेज़ पर एकाधिकार समाप्त हुआ वरन् इसका मूल्य 2500 रूपए प्रति वायल हो गया ।

चूंकि स्ट्रेप्टोकाइनेज़ का उत्पादन बैक्टीरिया से होता है और तुलनात्मक रूप से इसके प्लाज़्मिन उत्पादन की क्षमता अन्य प्लाज़्मिनोजन सक्रियकों की तुलना में कहीं अधिक है इसलिए ये दवा कभी-कभी रक्त को पतला कर उसके अंदरूनी स्राव का कारण बनती है परन्तु इमटैक के सतत् शोध के कारण इस दवा को इस तरह से विकसित किया गया है कि अब ये रक्त के थक्के के पास ही जाकर प्लाज़्मिनोजन को सक्रिय प्लाज्मिन में परिवर्तित करता है और रक्त का पतला होना भी रोकता है । थक्का घोलने वाले इस नए स्वरूप को "थक्का विशिष्ट स्ट्रेप्टोकाइनेज़" का नाम दिया गया है । इस "थक्का विशिष्ट स्ट्रेप्टोकाइनेज़" को इसके प्रारंभिक गुणों के आधार पर अमेरिका की 'नॉस्ट्रम फार्मास्युटिकल' ने विकसित करने की दिशा में कदम बढ़ाया (चित्र-3)।

चित्र 3: (दाएँ से बाएँ) डॉ. निर्मल मुलै तथा डॉ. गिरीश साहनी नई दिल्ली में दिनांक 24 नवम्बर, 2010 को माननीय श्री कपिल सिब्बल तथा प्रो. समीर कु. ब्रह्मचारी की उपस्थिति में 150 करोड़ यूएस डॉलर के लाइसेसिंग समझौते पर हस्ताक्षर करते हुए

वर्तमान समय में "थक्का विशिष्ट स्ट्रेप्टोकाइनेज़" का प्रथम चरण परीक्षण स्वस्थ मनुष्यों पर सफल रहा है । जल्द ही इसके द्वितीय एवं तृतीय चरण के परीक्षण किए जाएँगें ।

"थक्का विशिष्ट स्ट्रेप्टोकाइनेज़" बनाने के बाद इमटैक ने तृतीय पीढ़ी के स्ट्रेप्टोकाइनेज़ पर अपना ध्यान केन्द्रित किया और पुनः दो नए स्ट्रेप्टोकाइनेज़ के रूपों को पेटेंट करवाया । जिसमें प्रथम प्रारूप स्ट्रेप्टोकाइनेज़ की "थक्का विशिष्टता" कायम रखते हुए शरीर में प्रवेश के बाद इसकी अर्ध-आयु एवं इम्यून रिएक्टिविटी को क्रमशः बढ़ाया एवं घटाया गया है जिसके फलस्वरूप इसकी बहुत कम

मात्रा शरीर में देनी होगी । वर्तमान समय में इनके औद्योगिक स्तर पर बनाए जाने की तकनीक विकसित की जा रही है। दूसरे स्ट्रप्टोकाइनेज के प्रारूप को थक्का घुलने के समय पैदा होने वाले थ्रोम्बिन, फैक्टर पाँच एवं फैक्टर आठ के द्वारा होने वाले नकारात्मक प्रभाव को कम करने के लिए बनाया गया है जो कि थक्का विशिष्ट होगा साथ ही साथ थ्रोम्बिन, फैक्टर पाचं एवं फैक्टर आठ के कारण पुनः थक्का बनने वाले प्रभावों को कम करेगा । स्ट्रेप्टोकाइनेज़ के इन दोनों प्रारूपों को इमटैक ने 'नॉस्ट्रम फार्मास्युटिकल' को लाइसेंसीकृत किया है । इमटैक ने स्ट्रेप्टोकाइनेज़ के नित नए उपयोगी स्वरूप बनाकर एक नया मुकाम हासिल किया है । वर्तमान समय में इमटैक "उत्तक प्लाज़्मिनोजन सक्रियकों" का उत्पादन भी सस्ती तकनीक से बनाने में लगा है और कुछ नए उत्तक प्लाज़्मिनोजन सक्रियक बनाने की दिशा में प्रयासरत है जो कि अभी तक बाज़ार में उपलब्ध उत्तक निर्मित प्लाज़्मिनोजन सक्रियकों की तुलना में बेहतर होगें। अगर तकनीकी रूप से एवं औद्योगिक स्तर पर इनका विकास हो जाता है तो हमारा देश हृदयघात् के उपचार में उपयोग होने वाली दवाओं में विकसित देशों की तुलना से भी आगे हो जाएगा तथा कम दामों पर उपलब्ध में महँगी दवाओं का मूल्य कम हो जाएगा और ये दवाएँ अविकसित एवं विकासशील देशों में लाखों लोगों को बचाएँगी ।

थक्का घोलकों (क्लाट बस्टर) की चार पीढ़ियाँ

कम मूल्य की तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धा की चिकित्सा में सीएसआईआर को योगदान

अब तक की सबसे बड़ा सीएसआईआर अमेरिकी 150 मिलियन डॉलर का लाइसेंसीकरण सौदा और रॉयल्टी

प्राकृतिक स्ट्रेप्टोकाइनेज़ 2000

रिक्बिनेट स्ट्रेप्टोकाइनेज़ 2002

थक्का विशिष्ट स्ट्रेप्टोकाइनेज़ 2006

थ्राम्बिनरोधी अर्ध-आयुकाल थक्का घोलक 2010

नवप्रयोग युक्त गुणवत विज्ञान से विकसित

कममूल्य की चिकित्सा सुविधाएँ

संकलनः रेहान, आनंद माहेश्वरी, रीना, नीरज माहेश्वरी एवं गिरीश साहनी
सीएसआईआर-सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक), चण्डीगढ़

सूक्ष्मजीवीय लाइपेज़ : एक अद्‌भुत जैव उत्प्रेरक

किण्वक (Enzyme) परिचय :

किण्वक कोशिकाओं द्वारा संश्लेषित विशाल जैवीय अणु होते है जोकि हजारों ऐसे रासायनिक अन्त:परिवर्तन के लिए उत्तरदायी है जो जीवन को कायम रखते है। अत: किण्वकों के लिए जैव रासायनिक उत्प्रेरक (Biocatalyst) शब्द का प्रयोग होता है। एवं उत्प्रेरण की परिघटना जैव रासायनिक उत्प्रेरण कहलाती है । ये उच्च चयनशीलता वाले जैव उत्प्रेरक है। जो कि किसी क्रिया की दर तथा उसकी विनिर्दिष्टता को प्रभावी रूप से त्वरित करते हैं। कई किण्वक जीवित कोशिकाओं से परिशुद्ध क्रिस्टलीय अवस्था में प्राप्त किये गए हैं । परन्तु प्रयोगशाला में पहला किण्वक 1969 में संश्लेषित किया गया था । किण्वक उत्प्रेरित अभिक्रियाओं के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं :

- ग्लूकोज़ का ज़ाईमेज़ किण्वक की उपस्थिति में एथिल अल्कोहोल में परिवर्तन
- दूध का रेनिन किण्वक की उपस्थिति में दही में परिवर्तन

किण्वक (एंजाइम) मुख्यत: प्रोटीन होते है परन्तु कुछ आर.अन.ए. (RNA) अणु भी किण्वक की तरह कार्य करते हैं, इन्हें हम राइबोज़ाइम के नाम से जानते है। विविध उत्प्रेरकीय सक्रियता, उच्च उत्पादकता, अनुवांशिकत: रूपान्तरित करने में आसानी। मौसम पर अनिर्भरता तथा सस्ते माध्यम में तेजी से बढ़ने के कारण सूक्ष्मजीवीय किण्वक पौधों तथा जानवरों से पाए जाने वाले किण्वको से अधिक महत्वपूर्ण होते हैं । साथ ही सूक्ष्मजीवीय किण्वक पौधों तथा जानवरों से पाए जाने वाले किण्वकों से अधिक स्थायी होते है तथा सूक्ष्मजीवीयों का संवर्धन भी तुलनात्मक रूप से सरल होता है । Global Industry Analysts Inc. (GIAI) के अनुसार दुनिया में किण्वक व्यापार 2015 तक US $ 3.74 billion हो जायेगा । इस विशाल व्यापार में योगदान करने के लिए इमटैक अनेक किण्वकों पर खोज कर रहा है । इमटैक में मुख्यत: सूक्ष्मजीवीय किण्वकों पर खोज और अनुसंधान होता है ।

विभिन्न प्रकार के किण्वक जैसे कि प्रोटीएज़, ज़ाईलेज़, सेल्युलेज़, लैक्केज़, लाइपेज़ विभिन्न प्रकार की अपघटन एवं संश्लेषण अभिक्रियाओं में जैव उत्प्रेरकों के रूप में प्रयोग किए जाते हैं। इन सभी में से लाइपेज़ एक महत्वपूर्ण किण्वक है।

लाइपेज़ : लिपिड को अपघटित करने वाला किण्वक (एंजाइम) : लाइपेज़ (EC 3.1.1.3) हाईड्रोलेज़ वर्ग का किण्वक है जो कि वसा को तोड़ता है। सर्वप्रथम 1856 में क्लाड बर्नार्ड ने

पेन्क्रियेटिक जूस में लाइपेज़ की खोज की । लाइपेज़ का एक विशेष गुण [जलीय तथा कार्बनिक अंतरापृष्ठ (Interface) पर कार्य करने की क्षमता] उसे अन्य किण्वकों से अलग करता है । लाइपेज़ प्रकृति में व्यापक रूप से पौधों, जानवरों तथा सूक्ष्मजीवों में पाया जाता है । पौधों में ये वसीय नव अंकुरों में, जानवरों में अग्नाशय तथा पेट की श्लेष्मल झिल्ली की कोशिकाओं की सतह पर पाया जाता है जबकि सूक्ष्मजीव इसे कोशिका के बाहर स्रावित (secrete) करते है । यह स्रावित लाइपेज़ सूक्ष्मजीवों को कोशिका के बाहर उपस्थित तेल या वसा को भोजन के रूप में प्रयोग करने में सहायता प्रदान करता है । सूक्ष्मजीवों द्वारा लाइपेज़ का संश्लेषण सर्वप्रथम 1901 में बेसिलस प्रोडीजियोसस, बेसिलस पायोस्येनियस तथा बेसिलस फ्लोरिसेन्स में प्रकाश में आया जो कि अभी तक के सबसे भली प्रकार से शोध किये गए लाइपेज़ संश्लेषित करने वाले सूक्ष्मजीव है जिन्हें आजकल क्रमशः सिरेशिया मार्सीसेंस *(Serratia marcescens)*, सूडोमोनास एरुजीनोसा *(Pseudomonas aeruginosa)* तथा सूडोमोनास फ्लोरिसेन्स *(Pseudomonas fluorescens)* के नाम से जाना जाता है ।
के नाम से जाना जाता है ।

आजकल व्यापारिक रूप से प्रयोग होने वाले ज्यादातर लाइपेज़ का स्रोत सूक्ष्मजीव हैं । लाइपेज़ बनाने वाले सूक्ष्मजीवों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :

जीवाणु-एक्रोमोबेक्टर अल्कालिजेंस *(Achromobacter alcaligenes)*, आर्थ्रोबेक्टर *(Arthrobacter)*, सूडोमोनास स्टेफाइलोकोकस *(Staphylococcus)* आदि

फफूंद - एस्परजिलस नाइजर *(Aspergillus niger)* एस्परजिलस टेरस *(A. terreus)* एस्परजिलस कार्नीयस *(A. carneus)* आदि

खमीर-केनडीडा *(Candida)*, पीचिया *(Pischia)*, सेक्रोमाइसिस *(Saccharomyces)*, आदि

एक्टीनोमाइसिस - स्ट्रेप्टोमाइसिस *(Streptomyces)* आदि

इमटैक में लाइपेज़ पर शोध : हमारी प्रयोशाला में भी लाइपेज़ पर कार्य किया जाता है तथा प्रयोगशाला में हुए शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि लाइपेज़ का उत्पादन जीवाणुओं की संवर्धन परिस्थितियों जैसे कि कार्बन तथा नाइट्रोजन का प्रकार तथा सांद्रण, pH, तापमान, घुली हुई आक्सीज़न आदि पर निर्भर करता है । अधिक मात्रा में लाइपेज़ का उत्पादन करने के उद्देश्य से सूक्ष्मजीवों का संवर्धन ज्यादा आयतन वाले पात्र में किया जाता है जिसे बायोरिएक्टर (Bioreactor) कहते हैं । लाइपेज़ उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव (environmental samples) जैसे मिट्टी जल इत्यादि से (isolate) किये जाते है । सूक्ष्मजीवों को एक विशेष प्रकार के वसा वाले ग्रोथ मीडिया (growth media) पर

उगाया जाता है । लाइपेज़ उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव वसा को आहार के रूप में उपयोग करते है । इससे उनके आस-पास *हेलो ज़ोन* (halo zone or zone of clearance) बन जाता है। इस विधि से हम अनेक लाइपेज़ उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीवों को पहचान सकते है (चित्र 1)।

चित्र 1: (अ) लाइपेज़ संश्लेषित नहीं करने वाला सूक्ष्मजीव (ब) लाइपेज़ संश्लेषित करने वाला सूक्ष्मजीव

सूक्ष्मजीवी लाइपेज़ के औद्योगिक अनुप्रयोग: जैवप्रौद्योगिकी में महत्वपूर्ण किण्वकों की दृष्टि से सूक्ष्मजीवीय लाइपेज़ एक महत्वपूर्ण वर्ग है क्योंकि इन का प्रयोग बहुत से क्षेत्रों में होता है तथा इन्हें एक साथ काफी मात्रा में उत्पादित किया जा सकता है । लाइपेज़ के कुछ अनुप्रयोग सारणी में दर्शाये गए है । इमटैक में मुख्यत: सूक्ष्मजीवीय लाइपेज़ का अनुप्रयोग डिटरजेंट उद्योग और औद्योगिक इफ्लूएन्ट निरूपण (industrial effluent treatment) में किया जा रहा है । प्रतिकूल वातावरण में सक्रिय लाइपेज़ की मांग अधिक है ।

डिटरजेंट उद्योग में लाइपेज़ - किण्वक 1960 के दशक में डिटर्जेंट उत्पादों में सबसे पहले उपयोग में लाया गया था । हाइड्रोलिटिक लाइपेज़ का व्यापारिक अनुप्रयोग लौंडरी डिटरजेंट में होता है । लाइपेज़ की कुल बिक्री में 32% बिक्री डिटरजेंट किण्वक के रूप में होती है । किसी लाइपेज़ को डिटरजेंट में प्रयोग करने के लिए यह आवश्यक है, कि वह तापस्थिर हो तथा क्षारीय वातावरण में सक्रिय रह सके । हमारी प्रयोशाला में हुए शोधों के अनुसार मात्र डिटरजेंट कपड़ो को अच्छी तरह से साफ़ नहीं कर सकता है । लाइपेज़ वसा आधारित दाग को छुड़ाने में डिटरजेंट की सहायता करता है (चित्र 2)।

औद्योगिक इफ्लूएन्ट निरूपण में - लाइपेज़ का प्रयोग ग्रीस, वसा, तथा तेल की उच्च मात्रा वाले औद्योगिक इफ्लूएन्ट को साफ़ करने में किया जाता है । ऐसे औद्योगिक इफ्लूएन्ट का निरूपण बहुत

कठिन है । तेल की उच्च मात्रा वाले औद्योगिक इफ्लूएन्ट जल प्रदूषण का एक मुख्य कारण हैं । रासायनिक विधि से निरूपण पर्यावरण के अनुकूल नहीं होता है तथा अत्यधिक पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म दे सकता है । लाइपेज़ के बायोडीग्रेडेबल होने के कारण यह भौतिक तथा रासायनिक प्रक्रमों की तुलना में बेहतर तथा पर्यावरण के अनुकूल हैं । हमारी प्रयोशाला में लाइपेज़ को कागज़ और खाद्य उद्योगों के इफ्लूएन्ट के निरूपण में सफलता के साथ उपयोग किया गया है (चित्र 3)।

निष्कर्ष: जैसा कि उपरोक्त परिचर्चा से ज्ञात होता है, लाइपेज़ एक बहुउपयोगी किण्वक है जिसे बहुत से क्षेत्रो में प्रयोग किया जाता है तथा इसका प्रयोग उच्च मूल्य वाले अनुप्रयोगों जैसे ओलियो रसायन उद्योग, विशिष्ट रसायन संश्लेषण आदि में लगातार बढ़ता जा रहा है । इसके अतिरिक्त यह बायोडीग्रेडेबल होने के कारण पर्यावरण के अनुकूल है । लाइपेज़ पर निर्भर प्रक्रमों का आने वाला कल बहुत ही सुनहरा दिखाई पड़ता है हालांकि अभी इन प्रक्रमों के विकास की दर कुछ कम है तथा कुछ घटक जैसे कि तुलनात्मक रूप से इसका उच्च मूल्य, किसी अनुप्रयोग के लिए निर्धारित उत्प्रेरकीय विशिष्टता वाले किण्वकों की कमी, आदि अड़चनों का समाधान हमें ढूँढना है ।

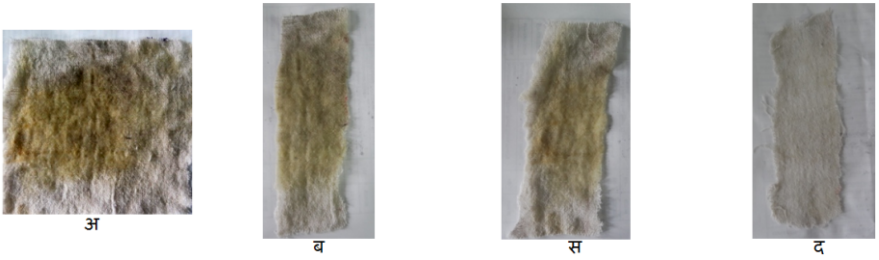

चित्र 2: अ, ब: तेल से गन्दा हुआ कपडा,
स: डिटरजेंट से धुलने के बाद, द: लाइपेज़ तथा डिटरजेंट से धुलने के बाद

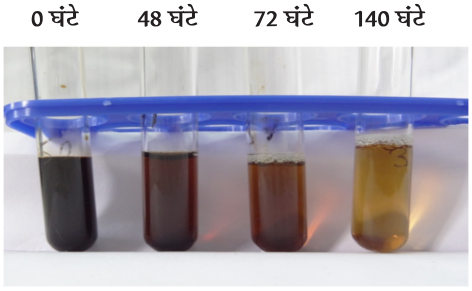

चित्र 3: लाइपेज़ उत्पन्न करने वाले सूक्ष्मजीव द्वारा ट्रीट किया गया औद्योगिक इफ्लूएन्ट

सारणी 1: जैवीय लाईपेज़ के औद्योगिक अनुप्रयोग		
उद्योग	**क्रिया**	**उत्पाद / उपयोग**
डिटरजेंट	वसा का जल अपघटन	कपड़ों से तेल आदि के दाग छुड़ाने के लिए
डेयरी उत्पाद	दुग्ध की वसा के जल अपघटन में, मक्खन की वसा के गुणों को आवर्धित करने में आदि	दूध, मक्खन आदि के स्वाद को बढ़ाता है
बेकरी उत्पाद	स्वाद बढानें में	उत्पाद की आयु बढ़ाता है
पेय पदार्थ	महक में आवर्धन	पेय पदार्थ
मीट तथा मछली	स्वाद में आवर्धन	मीट तथा मछली उत्पाद, वसा का निम्नीकरण
वसा तथा तेल	ट्रांस्ईस्टेरीफीकेशन, जल अपघटन	कोकोआ बटर, वसीय अम्ल, ग्लीसरोल, मोनो\डाई-ग्लीसराइड,
रसायन	संश्लेषण	रासायनिक पदार्थ संश्लेषण
औषधि	ट्रांस्ईस्टेरीफीकेशन, जल अपघटन	विशिष्ट लिपिड, पाचन वर्धी आदि
श्रृंगार	संश्लेषण	नमीकारक, इमुल्सीफायर
चमड़ा	जल अपघटन	चमड़ा उत्पाद
कागज़	जल अपघटन	कागज के गुणों में आवर्धन

संकलनः आभा शुक्ला, अनिल कुमार सिंह, पायल संध्या एवं स्वर्णजीत सिंह कैमियोत्रा
सीएसआईआर-सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक), चण्डीगढ़

मलेरिया

वैक्सीन और औषधि लक्ष्य की खोज में एकल प्रतिकाय और फॉज डिस्प्ले का प्रयोग

मलेरिया एक घातक बीमारी है, जो कि प्रतिवर्ष 20 लाख से भी ज्यादा लोगों की मौत का कारण बनती है । यह बीमारी प्लाज़्मोडियम नामक परजीवी से फैलती है तथा मादा एनाफ्लीज नामक मच्छर इसका वाहक है । प्लाज़्मोडियम परजीवी अपना जीवन चक्र पूरा करने के लिए दो जीवों पर निर्भर रहता है, एक मादा एनाफ्लीज मच्छर और दूसरा उच्च वर्ग के जीव जैसे कि मानव, चूहा, बन्दर इत्यादि । मानव में मलेरिया फैलाने वाले परजीवी मुख्यत: चार प्रकार के हैं - प्लाज़्मोडियम फालसिपेरम, प्लाज़्मोडियम वाईवैक्स, प्लाज़्मोडियम मलेरिया और प्लाज़्मोडियम ओवेल । चक्रीय बुखार मलेरिया का मुख्य लक्षण है जो कि लाल रक्त कोशिकाओं के खण्डन के समय होता है जब परजीवी उन कोशिकाओं को तोड़कर बाहर आता है । यह बुखार हर 48 घंटे के बाद आता है जबकि प्लाज़्मोडियम मलेरिया की वजह से हुए मलेरिया में यह हर 72 घंटे बाद होता है।

मलेरिया का जीवन चक्र: जैसा कि ऊपर बताया गया है कि मलेरिया परजीवी को अपना जीवन चक्र पूरा करने के लिए दो जीवों पर निर्भर करना पड़ता है - एक मादा एनाफ्लीज मच्छर जो कि रक्त चूसते समय परजीवी के स्पोरोजोइट्स (Sporozoites) मनुष्य के शरीर में अधो त्वचा (Dermis) में छोड़ देती है जो कि रक्त के माध्यम से यकृत (Liver) में पहुंच जाते हैं और वहां कोशिकाओं के भीतर प्रवेश कर विभाजित होकर 20000-30000 मिरोज्वाइट्स (Merozoites) बना देते हैं । यह मिरोज्वाइट्स यकृत कोशिकाओं से निकल कर लाल रक्त कोशिकाओं को अपना शिकार बनाते हैं । लाल रक्त कोशिकाओं में मिरोज्वाइट्स पहले (रिंग) वलय, फिर टरोफोज्वाइट्स और अन्त में सायजोन्ट (schizont) में तबदील हो जाते हैं । एक सायजोन्ट 16-32 नए मिरोज्वाइट्स में विभाजित हो जाता है । ये मिरोज्वाइट्स लाल रक्त कोशिकाओं का लयन कर बाहर आ जाते हैं और फिर से नई कोशिकाओं को अपना शिकार बनाते हैं । इस तरह ये चक्र चलता रहता है (चित्र 1)। इनमें से कुछ मिरोज्वाइट्स नर और

चित्र 1: मलेरिया परिजीवी जीवन चक्र

मादा गैमीटोसाइट्स में परिवर्तित हो जाते हैं और रक्त के माध्यम से मादा मच्छर के शरीर में चले जाते हैं और अपने जीवन चक्र का बाकी हिस्सा पूरा करते हैं ।

इस तरह से मलेरिया परजीवी के जीवन चक्र को तीन हिस्सों में बाँटा जा सकता है जो क्रमशः मच्छर के शरीर, मानव यकृत और लाल रक्त कोशिकाओं में पूरा होता है । चूँकि मलेरिया के सभी लक्षण लाल रक्त कोशिकाओं वाली स्थिति पर ही पता चलते हैं और इसी स्थिति पर ही मानव शरीर की प्रतिरोधक क्षमता के समक्ष इस परजीवी का सामना हो पाता है । अतः हमारी प्रयोगशाला का मुख्य लक्ष्य लाल रक्त कोशिकाओं वाली स्थिति है ।

प्रयोगशाला में चल रहा कार्यः इतने लम्बे समय के पश्चात् भी मलेरिया हमारे समक्ष एक घातक बीमारी के रूप में खड़ा है जिसके मुख्य कारण हैं : कीट नाशकों के प्रति मच्छरों का रोधक होना, प्रचलित दवाईयों के प्रति परजीवी का रोधक होना और सबसे जरूरी अभी तक किसी वैक्सीन का सफल न होना । अतः समय की माँग है कि हम कुछ ऐसे प्रोटीन या दूसरे तत्वों की खोज करें जो कि परजीवी के बचाव के लिए अनिवार्य हो ताकि उन्हें वैक्सीन या औषधि लक्ष्य के रूप में प्रयोग में लाया जा सके ।

मलेरिया परजीवी जब लाल रक्त कोशिकाओं को अपना शिकार बनाता है तो उसके कुछ प्रोटीन लाल रक्त कोशिकाओं की सतह पर आ जाते हैं जो कि कोशिका की बनावट एवं कार्य पर असर डालते हुए बाह्य वातावरण से पोषण संबंधी तत्वों तथा अन्य पदार्थों का आदान-प्रदान करती हैं । इनमें से कुछ प्रोटीन इस परिजीवी को रक्त वाहिनियों से बाहर निकलने में मदद करते हैं । संक्रमित कोशिकाएँ मस्तिष्क की रक्त वाहिनियों को अवरुद्ध कर देती हैं जोकि मस्तिष्क के रक्त संचार को प्रभावित कर दिमागी बुखार का कारण बनती हैं ।

अतः हमारी प्रयोगशाला में चल रहे कार्य का मुख्य उद्देश्य हैः परजीवी द्वारा संक्रमित कोशिकाओं की सतह पर उपस्थित इन प्रोटीनों की पहचान करना, तथा पता लगाना कि वे परजीवी के बचाव के लिए कितनें अनिवार्य है ताकि उन्हें वैक्सीन या फिर औषधि लक्ष्य के रूप में प्रयोग किया जा सके। इसके लिए हम मुख्यतः दो तकनीकों का प्रयोग करते हैं : एकल प्रतिकाय (Monoclonal Antibody) और फॉज डिस्प्ले (Phage display)।

प्रतिकाय (Antibody) किसी भी जीव के शरीर में बाह्य तत्वों के विरुद्ध बनती है और उन्हें शरीर से

बाहर कर जीव को उन तत्वों से होने वाले रोगों से मुक्त करवाती है । प्रतिकाय की विशेषता यह है कि यह एक विशेष पदार्थ के विरुद्ध ही काम करती है । अत: इन्हें किसी भी पदार्थ की पहचान करने के लिए सरल और अच्छा तरीका माना जाता है।

हमारी प्रयोगशाला में परजीवी से संक्रमित लाल कोशिकाओं की सतह पर उपस्थित परजीवी जनित प्रोटीन के विरुद्ध हाइब्रिडोमा (Hybridoma) तकनीक की सहायता से एकल प्रतिकाय बनाने वाले हाइब्रिडोमा बनाए जाते हैं ताकि इन प्रतिकायों की सहायता से परजीवी की प्रोटीन का पता लगाया जा सके । इसके लिए परजीवी ग्रसित कोशिकाओं की झिल्ली को अलग कर चूहे के शरीर में डाल दिया जाता है । चूहे के शरीर में श्वेत रक्त कोशिकाएँ सक्रिय हो जाती हैं जिन्हें प्रयोगशाला में लंबे समय तक जीवित रहने वाले हाइब्रिडोमा में परिवर्तित किया जाता है ।

इन हाइब्रिडोमा द्वारा बनाई गई एकल प्रतिकायों को विभिन्न तकनीकों जैसे कि एलाइजा (ELISA), वैस्टर्न ब्लॉटिंग (Westerm blotting) तथा इम्यूनोफलोरोसैन्स माइक्रोस्कोपी (Immunoflourescense microscopy) की सहायता से देखा जाता है कि वे केवल परजीवी ग्रसित कोशिकाओं से ही अभिक्रिया दिखाती हैं । फिर जब यह देख लिया जाता है कि यह प्रतिकाय परजीवी के प्रोटीन के विरुद्ध ही बनी है तो परजीवी के जीवन काल पर इनका प्रभाव देखा जाता है और जो प्रतिकाय परजीवी के जीवन को प्रभावित कर देती है उन्हें अच्छा लक्ष्य माना जाता है ।

मादा एनाफ्लीज मच्छर

यह सब करने के पश्चात् इन प्रतिकायों का उपयोग परजीवी के उन प्रोटीन का पता लगाने में किया जाता है जिनके विरुद्ध ये प्रतिकाय बनी हैं क्योंकि ये प्रोटीन परजीवी के निर्वाह के लिए अनिवार्य

होती हैं । इन प्रोटीनों का पता लगाने के लिए प्रतिकाय का एक कॉलम बनाया जाता है और उस कॉलम से परजीवी संक्रमित कोशिका के एक्सट्रेक्ट को गुजारा जाता है । जिस प्रोटीन के विरूद्ध प्रतिकाय होती है वह वहीं पर बन्ध जाती है बाकी सब निकल जाती है । बन्धी हुई प्रोटीन को अलग कर उसके एमिनो एसिड्स का क्रम पता लगाया जाता है जिससे उस प्रोटीन की पहचान की जा सके । प्रोटीन की पहचान करने के पश्चात् वह परजीवी के लिए किस तरह से अनिवार्य है यह देखा जाता है ताकि उसे वैक्सीन या औषधि लक्ष्य के रूप में प्रयोग किया जा सके ।

दूसरी तकनीक फॉज डिस्पले का प्रयोग दो मुख्य: कामों के लिए किया जाता है : एक तो उन प्रतिकायों जोकि परजीवी के जीवन को प्रभावित करती है, के अभिक्रित एमिनो एसिड्स के क्रम का पता लगाने के लिए ताकि उन्हें पेप्टाइड आधारित वैक्सीन में प्रयोग किया जा सके और दूसरे उन पेप्टाइडस का पता लगाने के लिए जोकि केवल परजीवी संक्रमित कोशिकाओं के साथ ही अभिक्रिया दिखाती है । फिर इन पेप्टाइडस का प्रयोग परजीवी के जीवन पर प्रभाव देखने के लिए किया जाता है ताकि उनका प्रयोग पेप्टाइड आधारित औषधि के रूप में किया जा सके । इस काम के लिए फॉज के समूह जिसमें हर फॉज अलग-अलग पेप्टाइड सतह पर दर्शाता है, को प्रतिकाय के साथ अभिक्रिया कर उन फॉजों को अलग किया जाता है जो कि प्रतिकाय द्वारा बाधित नहीं हो रहे । फिर जो फॉज बाधित हुए थे उन्हें अलग कर उनकी सतह पर उपस्थित पेप्टाइड के एमीनो एसिड्स के क्रम का पता लगाया जाता है । इसी तरह पहले उन फॉजों को अलग किया जाता है जो स्वस्थ कोशिकाओं से बन्ध जाते हैं । बचे हुए फॉजों को परजीवी संक्रमित कोशिकाओं से अभिक्रित करवाया जाता है और जो बन्ध जाते हैं उनकी सतह पर उपस्थित पेप्टाइड के एमिनो एसिड्स के क्रम का पता लगाया जाता है फिर इन पेप्टाइड्स को विभिन्न उपयोगों में प्रयोग किया जाता है।

मलेरिया परजीवी पर विजय पाना इतना आसान नहीं है पर मानव का कर्तव्य है प्रयास करना इस आशा के साथ कि कभी तो विजय प्राप्त होगी । इस कार्य के लिए पूरे विश्व भर के लोग मेहनत कर रहे हैं । कई तरह के तरीके खोजे जा रहे हैं । हमारी प्रयोगशाला में चल रहा शोधकार्य भी उसका एक हिस्सा है ।

संकलन: सुरिन्द्र कुमार ,शैलेन्द्र कुमार गौतम एवं गिरीश वार्ष्णेय
सीएसआईआर-सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक), चण्डीगढ़

क्षयरोग (टी.बी.) : एक अनसुलझी समस्या

क्षयरोग को प्राचीन काल से ही भारत में एक विकट रोग के रूप में देखा गया है । इसे राजयक्ष्मा भी कहा गया है, राजयक्ष्मा का अर्थ है सभी रोगों का राजा । क्षयरोग के लक्षण मिस्र की ममीज़ में भी देखे गए है जो यह बताता है कि क्षयरोग चिरकाल से ही मानव जाति की समस्या रही है । क्षय रोग (टी.बी.) मानव स्वास्थ्य के लिए दुनिया भर में सबसे बड़े खतरों में से एक बन गया है और दुनिया में दूसरे सबसे बड़े संक्रामक एजेंट के रूप में जाना जाता है । यह रोग एक साल में लगभग 2-3 लाख लोगों की मृत्यु का कारण बनता है ।

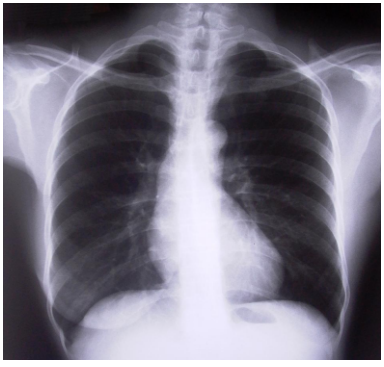

सामान्य फेफड़ो का एक्स-रे

बैक्टीरिया शरीर के उस हिस्से में संक्रमण करते है जहाँ ऑक्सीजन तनाव अधिक होता है, जिसमें प्राथमिक रूप में ऊपरी फेफड़े शामिल रहते है । जीवाणु हवा में एयरोसोल्ज़ और छोटी बूंदों में विद्यमान रहते हैं और सांस के रास्ते हमारे अंदर प्रवेश करते है तथा रोग फैलाते हैं । टीबी के साथ जुड़े सामान्य लक्षण बुखार, रात को पसीना, ठंड लगना, वजन में कमी, खांसी और थकान है। क्षय रोग फेफड़ों को प्रभावित करता है या शरीर के अन्य अंगों को खून के प्रसार द्वारा संक्रमित कर सकता है । टीबी बैक्टीरिया से संक्रमित व्यक्तियों में से सिर्फ 5-10% ही क्षयरोग से ग्रसित होते है, बाकी बचे लोगों में यह बैक्टीरिया सुप्त रूप में रहता है । विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू.एच.ओ) के अनुसार दुनिया की एक तिहाई आबादी सुसुप्त टीबी से सक्रंमित है, जिसमें से 5-10% सक्रिय टीबी का रूप लेते है ।

टीबी बैक्टीरिया ज्यादातर मनुष्यों की प्रतिरक्षा प्रणाली द्वारा नष्ट हो जाता है या शरीर के अंदर सुसुप्त रूप में विद्यमान रहता है । किन्हीं व्यक्तियों के शरीर में सुसुप्त अवस्था में विद्यमान क्षय रोग के यह रोगाणु उनकी प्रतिरक्षा प्रणाली पर हमला करके विशेष लक्षणों के साथ उभरते हैं तथा टीबी का कारण बनते है और जिनमें यह सुसुप्त अवस्था में रहते हैं उनमें क्षयरोग नहीं कर पाते । ऐसे ग्रसित

लोगों को कोई रोग नहीं होता है और जीवन भर उनका शरीर स्वस्थ्य रहता है । अगर मरीज़ की प्रतिरक्षा प्रणाली कमज़ोर है या मरीज़ दूसरे रोगों से जैसे : एचआईवी संक्रमित है तो सुसुप्त टीबी, सक्रिय टीबी का रूप ले सकता है ।

रोग की प्रगति

टीबी की प्रक्रिया को दो चरणों में विभाजित किया जा सकता है (चित्र 1) :

चरण I : इसकी शुरुआत एलव्योलाई (Alveoli) में बैक्टीरिया के प्रवेश के साथ होती है । वहाँ वायुकोशीय बृहत्भक्षक कोशिका (मैक्रोफेज) या नीमोसाइट बैक्टीरिया को फैगोसाइटोस कर लेती है तथा अक्सर उसे नष्ट कर देती है । लेकिन जीवाणुओं का विनाश होस्ट की प्रतिरक्षा स्थिति पर निर्भर करता है । यदि होस्ट जीवाणुओं को नष्ट करने में सक्षम नहीं होता, तो यह कोशिकाओं के अंदर रहकर वृद्धि करता हैं और जब तक बृहत्भक्षक कोशिका फट नहीं जाती, तब तक वृद्धि करता रहता हैं । इस मैक्रोफेज की प्रक्रिया में स्रावित जीवाणुओं को पास वाले मैक्रोफेज द्वारा phagocytose कर लिया जाता है तथा इस प्रक्रिया में मैक्रोफेज अनेक साइटोकिन्स स्रावित करती हैं, जो प्रतिरक्षा प्रणाली की कोशिकाओं को आकर्षित करते हैं, जैसे न्यूट्रोफिलिस टी कोशिका (T cells)। इससे एक विशेष संरचना का गठन होता है जिसे ग्रेन्युलोमा कहते हैं । ग्रेन्युलोमा मैक्रोफेज का विशेष संगठन है जिसमें अनेक मैक्रोफेज मिलकर विशाल बहु केंद्रीय कोशिका के रूप में परिवर्तित हो जाती है और चारों ओर से प्रतिरक्षी कोशिकाओं जैसे: न्यूट्रोफिलिस, डेन्ड्राइटिक कोशिका और टी कोशिका द्वारा घिरी रहती हैं ।

चरण II : एम. ट्यूबरकुलोसिस मैक्रोफेज के अंदर (phagocytosis) के माध्यम से प्रवेश करता है जिससे (endocytic vacuole) का निर्माण होता है जिसे फेगोसोम कहते हैं । सामान्य (phagosomal) परिपक्वता चक्र के अनुसार फेगोसोम-लाइसोसोम का संलयन होता है जिससे फेगोसोम का पीएच अम्लीय (एसिडक) हो जाता है एवं अन्य परिवर्तन जैसे : प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन मध्यवर्ती (ROS-Reactive Oxygen species), लाइसोसोमल एंजाइम (lysosomal enzymes) और विषाक्त पेप्टाइड्स भी शामिल है परंतु यह बैक्टीरिया अलग-अलग तरीकों से इस प्रतिकूल वातावरण का सामना कर सकता है ।

जैसे :-

1. फेगोसोम - लाइसोसोम संलयन का निषेध
2. फेगोसोमल परिपक्वता का निषेध

चित्र 1 : रोग की प्रगति

रोग की जांच

ट्यूबरकुलोसिस की जांच रोगी से लिए गए क्लिनिकल सैम्पल में माइकोबैक्टीरियम ट्यूबरकुलोसिस बैक्टीरिया की खोज द्वारा की जा सकती है । अन्य जांच तरीके दृढ़ता से ट्यूबरकुलोसिस की पुष्टि नहीं कर सकते । ट्यूबरकुलोसिस की जांच निम्न तरीकों से की जा सकती है :

1 छाती का एक्स-रे:

छाती का एक्स रे पल्मोनरी टीबी के रोगों में फेफड़ों की असमानताओं की जाँच करने के लिए उपयोग किया जाता है । पॉजिटिव रोगियों में देखी गई असमानताएँ जैसे पिंड (Nodules), सुराख (cavities) और अतिरिक्त फुफफुस द्रव (Pleural fluid) ।

2 संवर्धन परीक्षण (Culture Test) :

यह परीक्षण चयनात्मक मीडिया पर मरीज के थूक, मवाद या बायप्सी से लिये गये नमूने से एम. ट्यूबरकुलोसिस का सवंर्धन करके किया जाता है ।

3 ट्यूबरक्यूलिन त्वचा टेस्ट/मैनटॉक्स परीक्षण (Mantoux Test) :

मैनटॉक्स परीक्षण सुसुप्त टीबी के लिए व्यापक रूप से इस्तेमाल किया जाने वाला परीक्षण है । इसमें त्वचा में पीपीडी ट्यूबरकुलीन (PPD TUBERCULIN) नामक पदार्थ इंजेक्ट किया जाता है । यदि आप सुसुप्त टीबी से संक्रमित है, तो आपकी त्वचा पीपीडी ट्यूबरकुलीन के प्रति संवेदनशील है और आपकी त्वचा पर 48 से 72 घंटे के भीतर एक लाल उभार इंजेक्शन के स्थल पर विकसित होगा । यदि आपकी त्वचा प्रतिक्रिया करती है तो आपको टीबी के संक्रमण की पुष्टि के लिए छाती का एक एक्स-रे कराना होगा ।

4 न्यूक्लिक एसिड प्रवर्धन टेस्ट (NAATs):

न्यूक्लिक एसिड प्रवर्धन टेस्ट (NAATs) जैसे कि पोलीमरेज़ चेन रिएक्शन (Polymerase chain reaction- पीसीआर) टीबी के सक्रिय परीक्षण में एक अपेक्षाकृत नया प्रयास है । यह प्रतिक्रिया बुनियादी तौर पर डीएनए की संख्या को बढ़ाती है जिससे पीसीआर के हर चक्र के साथ डीएनए की संख्या दोगुनी हो जाती है । अगर सैम्पल माइकोबैक्टीरियल डीएनए की संख्या को बढ़ाता है तो परिलक्षित हो जाएगा कि सैम्पल सकारात्मक है ।

5 इंटरफेरॉन गामा रिलीज टेस्ट (Interferon gamma release test):

इंटरफेरॉन गामा रिलीज टेस्ट (IGRA) से एक व्यक्ति की प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को जांचा जा सकता है, जो व्यक्ति एम. ट्यूबरकुलोसिस से संक्रमित होते हैं और जब उनकी सफेद रक्त कोशिकाओं को एम. ट्यूबरकुलोकिसस से व्युत्पन्न एंटीजन के साथ मिलाया जाता है तो वे इंटरफेरॉन गामा स्रावित करती हैं ।

यह क्वान्टिफेरॉन (Quantiferon)® टीबी परीक्षण के नाम से व्यावसायिक तौर पर उपलब्ध है, जो कि एम.ट्यूबरकुलोसिस से संक्रमित रक्त की जांच के लिए पंजीकृत है । इसे 2001 में संयुक्त राज्य अमेरिका (अमेरिका) के खाद्य एवं औषधि प्रशासन (FDA) ने मंजूरी दे दी थी ।

6 सीरम वैज्ञानिक परीक्षण:

एम.ट्यूबरकुलोसिस से व्युत्पन्न एंटीजन को विशिष्ट एंटीबॉडी द्वारा जांचा जाता है (चित्र 2)।

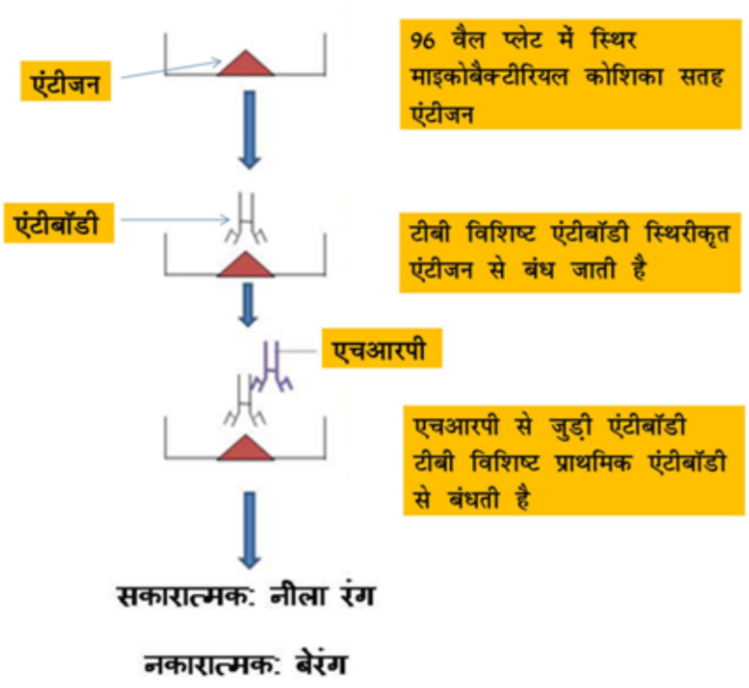

चित्र 2 : सीरम वैज्ञानिक परीक्षण

दवा प्रतिरोधी माइकोबैक्टीरिया

माइकोबैक्टीरियल कोशिका की दीवार की संरचना अत्यधिक जटिल होती है । बाहरी झिल्ली, माइकोलिक एसिड, ग्लाइकोपेप्टाइड और सल्फोलिपिड्स से बनी होती हैं । जीवाणु एक दूसरे के साथ मिलकर डोरी रूपी सरंचना बनाते है जो इसकी खास विशेषता हैं । इस विशेषता को रोगजनक उपभेदों में सबसे खतरनाक माना जाता है । एम. ट्यूबरकुलोसिस अपनी बाहरी झिल्ली में बायोफिल्म (Biofilm) बनाता है जोकि सतह मैट्रिक्स (extracellular matrix) की तुलना में 50 गुना अधिक मात्रा में प्रयोग किए जाने पर भी रिफैम्पिसिन (Rifampicin) और आइसोनिआजिड (isoniazid) बायोफिल्म पर कोई प्रभाव नहीं कर पाती । पिछले दो दशकों के दौरान माइकोबैक्टीरिया मानव जीवन के लिए

बड़ा खतरा बन गया है और माइकोबैक्टीरिया के कई दवा प्रतिरोधी उपभेद रिफैम्पिसिन सहित सभी टीबी दवाओं के खिलाफ प्रतिरोध विकसित कर चुके है । दवा प्रतिरोधी (Drug resistant) माइकोबैक्टीरिया को मारने के लिए लम्बी अवधि तक चिकित्सा दी जाती है जिसके परिणाम स्वरूप शरीर पर अन्य दुष्प्रभाव होते है । हाल ही में माइकोबैक्टीरिया के कुल दवा प्रतिरोधी (TDR ; Totally drug resistant) उपभेद पाए गए हैं, जोकि सभी टीबी दवाओं के लिए प्रतिरोध विकसित कर चुके हैं ।

टीबी के खिलाफ उपलब्ध उपचार

टीबी के खिलाफ उपलब्ध वैक्सीन रोग से पूरी सुरक्षा प्रदान नहीं करती है । माइकोबैक्टीरियम बोविस को बी.सी.जी. (बेसिली Calmette- Guerin) वैक्सीन बनाने में इस्तेमाल किया जाता है। टीबी के खिलाफ उपलब्ध उपचार में एंटीबायोटिक दवाओं का इस्तेमाल होता है । इस्तेमाल किए जाने वाले सबसे अधिक एंटीबायोटिक दवाओं में पायराज़ीनामाइड (Pyrazinamide) और एथेमब्युटोल (Ethambutol) है जोकि आईसोनियाजिड और रिफैम्पिसिन के संयोजन में छह महीने तक मरीज को दी जाती हैं । एंटीबायोटिक उपचार आमतौर पर DOTS (Direct observe therapy for short term) के रूप में मरीज को दिया जाता है । पिछले 40 वर्षों में नई दवाओं की खोज जारी है और हाल ही में एक diarylquinoline दवा यानी bedaquiline (TMC207) का सफलतापूर्वक परीक्षण हो चुका है । TMC207 विशेष रूप से प्रतिरोधी उपभेदों से संक्रमित रोगियों के लिए दी जाती है । क्षयरोग के खिलाफ नई दवाओं की खोज जरूरी है ।

इमटैक में टीबी पर शोध

दुनिया भर में होने वाली लाखों मौतों का कारण क्षयरोग है जिसके संक्रमण के प्रसार को रोकने के लिए व्यापक अनुसंधान दुनिया भर में किये जा रहे हैं । क्षयरोग बैक्टीरिया से होने वाली रोगजनक प्रक्रिया को समझना बहुत जरूरी है । इमटैक रोगाणुओं के अनुसंधान पर विशेष रूप से केन्द्रित भारत का एकमात्र संस्थान है । क्षयरोग के इलाज में लगभग 6-9 महीने के आसपास लग जाते है। क्षयरोग की दूसरी बड़ी समस्या बैक्टीरिया में प्रतिरोध क्षमता का विकास है जिसका इलाज महंगा होने के साथ-साथ लम्बा भी होता है ।

इस बहुशोध प्रतिरोधक क्षमता के पीछे बायोफिल्म का महत्वपूर्ण योगदान है । इसलिए मौजदा चुनौती

बायोफिल्म को नष्ट करने में निहित है। बायोफिल्म में बैक्टीरिया एक निश्चित आबादी में होने के बाद अपने चारों और एक (Extracellular Polymeric Substance- इ.पी.एस.) का निर्माण करते हैं । यह बैक्टीरिया को आपस में जोड़ने और रोगी की कोशिका से जुड़ने में मदद करता है । इ.पी.एस. की मात्रा बायोफिल्म में 90 प्रतिशत होती है । ईपीएस की संरचना विभिन्न बैक्टीरिया में अलग-अलग है । इ.पी.एस. में प्रोटीन, कार्बोहाइडेटस मुख्य रूप में पाये जाते है । इसी तरह माइकोबैक्टीरियम की बायोफिल्म में mycolic acid की अधिकता को देखा गया है । इमटैक अभी टीबी की इसी समस्या पर काम कर रहा है । टीबी बायोफिल्म में बहुशोध प्रतिरोधक क्षमता का विकास पाया गया है । बायोफिल्म के होने की वजह से बैक्टीरिया में एंटीबायोटिक से लड़ने की क्षमता 100-1000 गुना बढ़ जाती है । इस क्षमता के पीछे का कारण बैक्टीरिया का भिन्न क्रियात्मक अवस्थाओं में होना माना गया है, जिसपर एंटीबायोटिक अपना असर नहीं कर पाती है । टीबी की बायोफिल्म पर सभी दवाएँ (isoniazid, rifampicin,pyrazinamide) नाकाम हैं । इसलिए बायोफिल्म को नष्ट करना टीबी के शीघ्र इलाज के लिए आवश्यक है । इमटैक अभी टीबी बायोफिल्म को नष्ट करने के लिए नए ड्रग खोज रहा है । अब तक 300000 नये अणुओं का परीक्षण हो चुका है । जिसमें से 20 को टीबी के खिलाफ असरदार पाया गया है । इसी तरह इमटैक नए निदान के प्रारूप खोजने पर भी काम कर रहा है । इसके लिए इमटैक में नए प्रकार की Chemiresister Army तकनीक का प्रयोग हो रहा है । यदि इस तकनीक में सफलता मिली तो यह एक आसान प्रकार के निदान को जन्म देगा जोकि अत्यंत सस्ता और सुलभ होगा । इसके अलावा इमटैक में टीबी के नए वैक्सीन भी बनाए जा रहे हैं । यह टीबी वैक्सीन अभी प्रयोग किए जाने वाली बी.सी.जी. वैक्सीन से बेहतर होगी । संक्षेप में क्षय रोग अभी तक अनसुलझी पहेली बना हुआ है । इस हेतु इमटैक वैज्ञानिक बुनियादी और अनुप्रयुक्त शोध में लगे हैं ।

संकलनः हरिओम कुशवाहा, अभिषेक त्रिवेदी, पूजा वार्ष्णेय,
सुशांत दर एवं अश्विनी कुमार
सीएसआईआर-सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक), चण्डीगढ़

पशु गृह – प्रयोगमूलक पशु सुविधा

पशु गृह का नाम सुनते ही, आप सभी पाठकों के मन में हमेशा यह जानने की उत्सुकता होती होगी कि पशु गृह में कौन-कौन से पशु कैसे और क्यों रखे जाते हैं। आप सब यह भी जानना चाहते होंगे कि जैसे मनुष्यों को अपना जीवन खुले वातावरण में अपनी इच्छानुसार व्यतीत करने की स्वतंत्रता है तो हम पशुओं को क्यों पिंजरो में डालकर उन्हें अपना पूरा जीवन-काल बंद पिंजरे में व्यतीत करने को बाधित करते हैं। आज इस लेख द्वारा आप लोगों के इन सब प्रश्नों के उत्तर देने की कोशिश की गई है, आशा है कि हम इसमें सफल हो पाएँ ।

"Research using experimental animals is a vital component of medical research which has led to innumerable innovations and discoveries benefiting mankind."

पशुओं के शोध में योगदान की वजह से आज हम सब अच्छा जीवन व्यतीत कर पा रहे हैं ।

जीव-जन्तुओं का प्रयोग मौलिक व व्यावहारिक, दोनों प्रकार के शोध कार्यो के लिए होता हैं। इन प्रयोग प्रतिरक्षा अनुसंधान, औषधि खोज, जैव प्रौद्योगिकी, विषैलापन जाँचने इत्यादि के लिए किया जाता है। विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तु इन शोध कार्यो में मनुष्यों के स्थान पर मॉडल के तौर पर प्रयोग में लाए जाते हैं, अर्थात् सभी शोधों के परीक्षण मनुष्यों पर करने से पहले पशुओं पर किए जाते हैं । मनुष्यों में जो विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ होती हैं, उन की चिकित्सा व रोकथाम के लिए यह बीमारियाँ भी पहले प्रयोग के तौर पर जीव-जन्तुओं में प्रेरित (induce) की जाती हैं, तत्पश्चात् उन बीमारियों को समझने के लिए उन जीवों पर विभिन्न प्रकार के प्रयोग किए जाते हैं । जीव-जंतुओं की महत्ता को समझते हुए हमें इनकी उचित तरह से देखभाल करनी चाहिए क्योंकि अगर हम शोध में अस्वस्थ पशुओं का उपयोग करेंगे तो उस शोध का जो निष्कर्ष आएगा तो वह ठीक नहीं होगा क्योंकि सिर्फ अच्छे व स्वस्थ पशु ही अच्छे परिणाम दे सकते हैं ।

जहाँ एक ओर जीव-जन्तुओं का प्रयोग मनुष्यों की बीमारियों को समझने व उनके उपचार व रोकथाम में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है वहीं दूसरी ओर, पूर्व में जीव-जन्तुओं का बगैर सोचे समझे व जरूरत से ज्यादा उपयोग भी किया गया है । जिसके उपरान्त भारत सरकार ने पशुओ के उचित रख-रखाव एवं उनके उचित प्रयोगों के लिए "पशुओं पर प्रयोगों संबधी नियन्त्रण और पर्यवेक्षण के

लिए समिति" (Committee for the purpose of control and supervision of control and supervision of experiments on Animals, CPCSEA) का गठन किया । यह समिति भारत सरकार के पर्यावरण और वन मंत्रालय विभाग के अधीन कार्यरत है । यह समिति राष्ट्रीय स्तर पर पशुओं की देखभाल व उचित इस्तेमाल को नियन्त्रित करती है व पशुओं से संबधित अधिसूचनाएं जारी करती है । इस समिति की अधिसूचना के अनुसार किसी भी संस्थान को पशुओं के प्रजनन (Breeding) व प्रयोगों में उपयोग करने से पूर्व सीपीपीएसईए CPCSEA पंजीकरण (Registration) करवाना अनिवार्य है । इसी की अनुपालना में इमटैक ने भी अपना पशु गृह 1999 में पंजीकृत करवा लिया था व इसकी पंजीकरण संख्या है: 55/1999/CPCSEA. ।

पशुओं पर प्रयोगों संबधी नियन्त्रण और पर्यवेक्षण के लिए समिति (CPCSEA) ने संस्थान के स्तर पर पशुओं के उचित प्रयोग व रख रखाव को नियंत्रित करने के लिए संस्थागत पशु सदाचार समिति (Institutional Animal Ethics Committee) गठित की गई है।

प्रयोगमूलक पशु सुविधा, किसी भी संस्थान के शोध कार्य का एक अभिन्न अंग होता है, जो संस्थान के वैज्ञानिकों को शोध कार्यो के लिए उत्तम व स्वस्थ जीव-जन्तु प्रदान करता है ।

इमटैक में भी पशु गृह के CPCSEA के अनुरूप समय-समय पर पशुओं के रख-रखाव सबंधित अधिसूचनाओं के अनुसार पशुओं की देखभाल करता है । जिसके अनुसार :

पशुओं के कमरों का तापमान	22 ± 1°C
आर्द्रता	30-70%
रोशनी का समय	12 घंटे लाइट व 12 घंटे अंधेरा
प्रकाश तीव्रता	300-325 LUX

इसके साथ ही हम इमटैक में सभी पशुओं को अपना जीवन व्यतीत करने के लिए उन सुविधाओं को देने की कोशिश करते हैं जैसा कि वे अपने स्वाभाविक वातावरण में व्यतीत करते हैं । इन सुविधाओं को हम पर्यावरण संवर्धन (Environment Enrichment) कहते हैं । जैसाकि स्वाभाविक तौर पर देखा जाता है कि चूहों को घोंसला बनाना, सुरंग बनाना, खिलौनों से खेलना पसंद है इसी प्रकार हम कोशिश करते हैं कि हमारे पशुगृह के पशु भी इस प्रकार की गतिविधियों में अपना समय

व्यतीत करें । जिससे इन पशुओं का जीवन आनन्दमय हो सके । आपकी जानकारी के लिए पर्यावरण संवर्धन दर्शाने के लिए हमने इंटरनेट से कुछ ऐसे चित्र इस लेख में लगाए हैं ।

पर्यावरण संवर्धन से सम्बद्ध चित्र

वैसे भी प्रत्येक प्राणी से मानवीय व्यवहार किया जाना चाहिए । गाँधी जी ने भी कहा था "The future of a nation and its moral progress can be judged by the ways its animals are treated"

इमटैक पशु गृह में निम्नलिखित प्रकार के जीव जन्तु हैं:

1ण छोटा चूहा (माउस)/(Mouse - BALB/C, C57BL/6, FVB, C3He)
2ण बड़ा चूहा (रैट) - (Rat - Wistar, Sprague Dawley)
3ण खरगोश - (Rabbit - NZW rabbits)
4ण हैमस्टर - (Hamsters - Syrian Hamsters)

1. **छोटा चूहा (माउस) -** माउस शोध कार्यों में सबसे अधिक प्रयोग में लाए जाने वाला प्राणी है और विश्वभर में प्रतिवर्ष लगभग 20 से 30 मिलियन छोटे चूहे (कुल प्रयोगशला पशुओं का 85 प्रतिशत) प्रयोग में लाए जाते हैं । चूहे का प्रजनन जीव विज्ञान, विषाक्तता परीक्षण, कैंसर शोध, प्रतिरक्षा विज्ञान आदि जैसे कई महत्वपूर्ण अनुसंधान के क्षेत्रों में उपयोग किया जाता हैं ।

सी3एच/एचई

सी57बीएल/6

डीबीए/1

बी ए एल बी/सी

2. **बड़ा चूहा (रैट)** - यह मुख्यत: विषाक्तता परीक्षण, पोषण, व्यवहार, कैंसर, औषधीय व शारीरिक क्रिया संबंधी शोध कार्यों में प्रयोग होते हैं ।

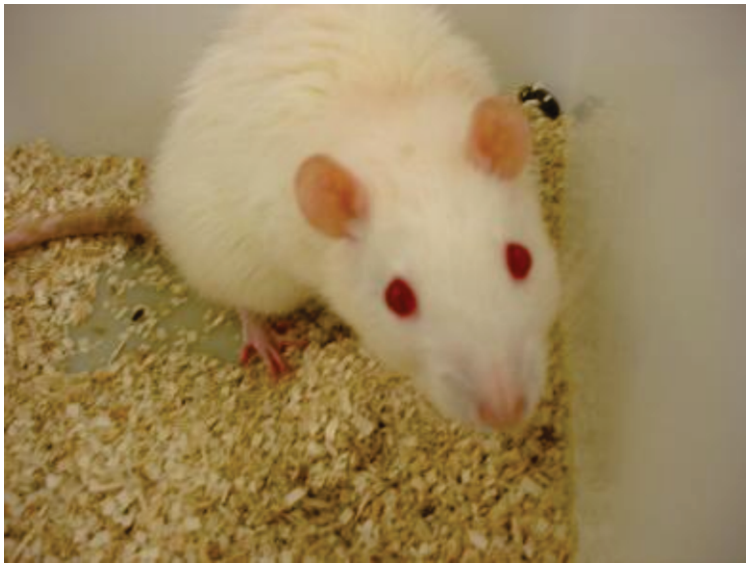

सप्रेग डॉली चूहा

3. **खरगोश** - खरगोश मुख्यत: प्रजनन जीव विज्ञान, शारीरिक क्रिया, नेत्रविज्ञान, ज्वरोत्पादक विज्ञान संबंधित शोध के लिए, प्रतिरक्षी बनाने के लिए प्रयोग किए जाते हैं ।

एन ज़ैड डब्ल्यू खरगोश

4. **हैमस्टर** – कैंसर, पोषण, औषधीय, विषाणु, विषाक्तता व प्रजनन विज्ञान में हैमस्टर प्रयोग में लाए जाते हैं । इसके अतिरिक्त त्वचा उपरोप, परजीवी विज्ञान व दंत संबंधी शोध में भी उपयोग में लाए जाते हैं ।

हैमस्टर

पशु गृह के दृश्य

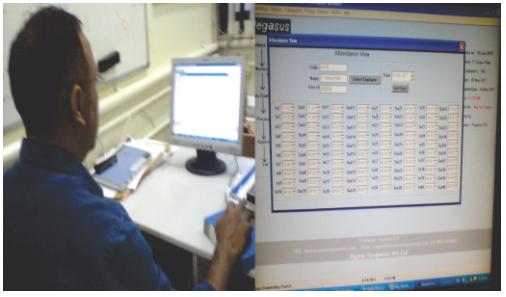

नियंत्रित प्रवेश व्यवस्था व इलैक्ट्रॉनिक निगरानी

स्वच्छ बरामदा प्रथम तल

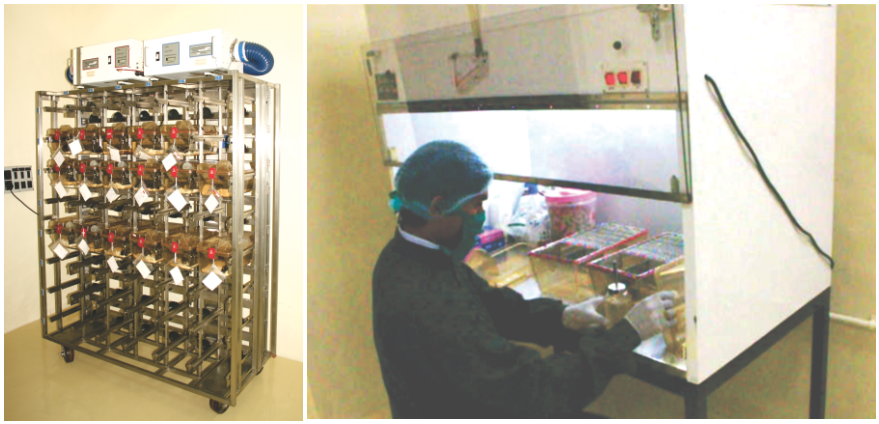

व्यक्तिगत पिंजरों की इकाई तथा पिंजरा बदलना

पशु कक्षों के दैनिक कार्य शैड्यूल की देखरेख व ब्योरा

प्रजनन प्रक्षेत्र में जाने से पूर्व की तैयारी

संकलन : भुपिंदर सिंह, देवराज पराशर, गरिमा मिततल, अशोक कुमार एवं नीरज खत्री

सीएसआईआर–सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक), चण्डीगढ़

जैव सूचना केन्द्र

डीएनए अनुक्रमण (सीक्वेंसिंग) की अत्यंत सक्षम विधियों के विकास ने पिछले कुछ वर्षों में डीएनए सीक्वेंसिंग की लागत को काफी घटा दिया है । इससे जीनोमिक युग की शुरुआत हुई है जिसमें विभिन्न जीवों के अधिक से अधिक जीनोमों का अनुक्रमण किया जा रहा है, परन्तु इससे सूचना के इस वृहद भण्डार को सूचीबद्ध करने व उसकी व्याख्या करने की एक बड़ी चुनौती सामने आई है । इस समस्या के निदान के लिए, कम्प्यूटर ने हल दिया तथा जीव विज्ञान की एक नई शाखा सामने आई है- कम्प्यूटेशनल जीव विज्ञान । कम्प्यूटेशन जीव विज्ञान युक्त प्रयोगों के परिणामों से प्राप्त सूचना के उन्नत सूचीकरण की अभिनव विधियाँ तैयार की जाती है, प्रणाली स्तर पर अनुकारों (सिमुलेशन) के माध्यम से नए प्रश्नों के लिए नई एल्गोरिदम बनाई जातीं हैं तथा वर्तमान अध्ययनों की व्याख्या के लिए गणितीय मॉडल तैयार किए जाते है । मानव संसाधन के पोषण के लिए सूचीकरण तथा अभिनव विधियों की रचना के उद्देश्य से डीबीटी तथा सीएसआईआर ने संयुक्त तौर पर इमटैक में जैव सूचना केन्द्र स्थापित किया जिसकी प्रमुख भूमिकाएँ हैं -

क) डी.बी.टी. द्वारा संचालित जैव प्रौद्योगिकी सूचना प्रणाली तंत्र (बी.टी.आई.एस.नैट) के अंतर्गत राष्ट्रीय सूचना सेवाएं प्रदान करना ।

ख) जैवसूचना विज्ञान तथा संगणात्मक जैव विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान एवम् विकास कार्य करना ।

ग) कम्प्यूटर संसाधनों द्वारा औषधि आविष्कार ।

घ) प्रोटीन मॉडलिंग एवं अभियांत्रिकी के लिए बुनियादी ढाँचे को कायम रखना ।

ड़) इमटैक से संबंधित सूचनाओं को प्रदान करना ।

इसकी प्रमुख गतिविधियों का विस्तृत विवरण कुछ इस प्रकार है:-

राष्ट्रीय सुविधा : भारत सरकार ने 1987 में जैव प्रौधोगिकी सूचना प्रणाली तंत्र स्थापित किया । शुरूआत में नौ वितरित सूचना केन्द्र स्थापित किए, जिनका उदेश्य जैव प्रौधोगिकी से संबंधित बिखरी हुई जानकारियों में संजोने के लिए मंच तैयार करना था । इमटैक में स्थापित जैव सूचना केन्द्र इसका

एक अंग है । इस केन्द्र ने हर क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज की है, चाहे वह अच्छी शोध हो या फिर डेटाबेस (Database) या सॉफटवेयर संबंधित सेवाएँ प्रदान करना हो । इसके अलावा यहाँ के कर्मचारियों ने विज्ञान सम्मेलन तथा कार्यशालाओं के आयोजन से, बहुत सारे शोधकर्ताओं तथा वैज्ञानिकों को प्रशिक्षण प्रदान किया है । 'ओपन सौर्स' (सूत्रों को सभी को प्रदान करना), इस केन्द्र की सबसे बड़ी खासियत है, जिसके अंतर्गत 100 से भी ज्यादा सॉफटवेयर और डेटाबेस को निःशुल्क प्रदान किया गया हैं, जिन्हें लगभग एक लाख लोग प्रतिदिन क्लिक करते हैं ।

उच्च क्षमतायुक्त कम्पयूटेशनल सर्वर

जैव सूचना केन्द्र का शोध में योगदान : वर्तमान में, 10 से भी ज्यादा विधार्थी, इस केन्द्र में अपना शोध कार्य कर रहें है । इस केन्द्र की प्रमुख शोध विषयों का विवरण नीचे दिया गया है:-

क) कम्प्यूटरीकृत प्रोटीन संरचना एंव कार्यात्मक लक्षण वर्णन : प्रोटीन मॉडलिंग एवम् अभियांत्रिकी इस केन्द्र का महत्वपूर्ण अंग है । संरचनात्मक अनुमान की मुख्य तकनीक, जैसे अनुरूपता मॉडलिंग (होमोलोजी मॉडलिंग), मोड़ परिज्ञान (फोल्ड रिकाग्निशन) इत्यादि, इसकी दिनचर्या का हिस्सा है इसके अधिकारी-गण प्रोटीन संरचना विज्ञान से जुड़े अन्य वैज्ञानिकों के साथ मिलकर प्रोटीन संरचना को सुलझाने के लिए प्रयत्न करते हैं ।

ख) कम्प्यूटर द्वारा टीकाकरण परिकल्पना : इस जिनोमिक युग में, न्यूनतम दुष्प्रभाव की

व्यक्तिगत चिकित्सा की परिकल्पना एक बहुत बड़ी चुनौती है । पारंपरिक टीकाकरण संपूर्ण रोगाणु पर आधारित था, जो महंगा तथा विषाक्त होता था । इसलिए पेप्टाइड (Peptide) पर आधारित टीकाकरण की आज बहुत आवश्यकता है । कम्प्यूटर से पेप्टाइड की परिकल्पना करने से समय एवम् धन, दोनों की बचत होती है । इस जरूरत को समझते हुए बी.आई.सी. की एक बड़ी परियोजना संचालित की है, जिसका नाम "ऐपीटोप के आधार पर कम्प्यूटरकृत सबयूनिट टीकाकरण की परिकल्पना करना" है । इस परियोजना के अंतर्गत कई डेटाबेस व सॉफटवेयर का निर्माण किया जिनमें मुख्यत: MHCBN, TAPpred, Propred, CBtope, LBtope शामिल हैं ।

ग) जिनोम/प्रोटियोम टिप्पणी : बीआईसी की प्रमुख गतिविधियों में जीन की पहचान करना और उनकी संरचना का अनुमान लगाना शामिल है । अग्रलिखित सॉफटवेयर, इस क्षेत्र में बीआईसी का योगदान है:

अ) FTG: प्रोकेरियोटिक जिनोम मेक जीन को अवस्थित करने हेतु ।

ब) EGPred : युकेरियोटिक (Eukaryotic) जिनोम में जीन का अनुमान लगाने हेतु ।

स) GWFASTA: जिनोम स्तर पर समानता परिक्षण हेतु ।

इसके अलावा प्रोटियोम (Proteome) की टिप्पणी के कुछ सॉफटवेयर भी विकसित किए, जैसे: ESLpred, PSLpred, HSLpred.

घ) औषधि लक्ष्य: (Drug targets) इस क्षेत्र में बीआईसी द्वारा निर्मित सॉफटेवयर में GPCRpred, NRpred, GPCRsclass, VICMpred नाम शामिल है ।

ड.) रसायन सूचना विज्ञान (Chemoinformatics) यह जैव सूचना केन्द्र की एक नई गतिविधि है, जिसमें सम्भावित अवरोधकों (Inhibitors) का अनुमान एवम् रचना पर शोध की जाती है । इस योजना के अंतर्गत QSAR तथा Docking मॉडल का निर्माण किया जाता है । इस क्षेत्र में भी बीआईसी के शोधकर्ताओं ने उपस्थिति कुछ Software का निर्माण करके जाहिर की है ।

च) औषधि आविष्कार हेतु कम्प्यूटर संसधान (CRDD) : बीआईसी के शोधकर्ताओं ने इस क्षेत्र में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया है । यह क्षेत्र सीएसआईआर द्वारा संचालित एक बहुत बड़ी परियोजना "ओपन सोर्स फॉर ड्रग डिस्कवरी" का उपागम है । इस योजना से औषधि अविष्कार से जुड़े वैज्ञानिकों को एक मंच पर अपने मुद्दों पर विचार-विमर्श करने का अवसर प्रदान किया है ।

छ) सूचना तकनीकी संबंधित सेवाएँ : बीआईसी ने इमटैक एवम् वैज्ञानिक समुदाय को सूचना तकनीकी सेवाएँ प्रदान करने में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया है । इसमें Email, CAN, Internet, Ethernet, wireless आदि प्रमुख सेवाएँ शामिल है ।

इसके अलावा संस्थान में उपलब्ध सभी कम्प्यूटर एवं नेटवर्क की देखरेख की जिम्मेदारी भी भली भांति संभाली है । (COMPASS) का प्रयोग करके भंडार एवं क्रय विभाग में स्वचालित प्रणाली कार्यान्वयन भी बीआईसी की देन है ।

संकलनः संदीप कुमार ढांडा, हरमिंदर सिंह एवं जी. पी. एस. राघव
सीएसआईआर-सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान (इमटैक), चण्डीगढ़

सूक्ष्म अणुओं/परमाणुओं का परिवार : परिचय एवं उपयोग

परिचय

"रहिमन देख बड़न को, लघु न दीजिये डारि,
जहाँ काम आवै सूई, कहा करै तलवारि"।

रहीम जी ने छोटे की महत्ता के बारे में बड़ी सुंदरता से लिखा है जो कि आज के युग में सार्थक होता दिखाई दे रहा है - नैनोक्रान्ति के रूप में। आइए, हम आपको इस क्रांति से अवगत करवाते हैं और इसके अनेकानेक उपयोग और लाभों से रू ब रू होते हैं।

क्या आपने कभी सोचा है कि सभी चिकित्सीय परीक्षण बिना रक्त बहाए और दर्द किए हो जाएं ? बीमारी का इलाज शल्य चिकित्सा के बिना हो जाए, सिर दर्द की दवा सिर्फ सिर तक पहुँचे, अन्य अंगो पर कुप्रभाव ना डाले। पेड़-पौधों की बीमारियों के बारे में पहले से पता लग जाए ताकि उचित कदम उठाए जा सकें। ऐसे कपडे बनें जो कि कभी मैले ही ना हों? क्या यह सब सम्भव है? इसका जवाब विज्ञान के पास है जो कि एक नई क्रांति के लिए अग्रसर है। आज के वैज्ञानिक युग में यह सब सम्भव है, नैनो – प्रोद्योगिकी के द्वारा।

आखिर ये नैनोविज्ञान है क्या ?

जैसे–जैसे विज्ञान अति विशिष्ट होता जाता है यह नैनोप्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रवेश करता जाता है। नैनोप्रौद्योगिकी उन पदार्थो के प्रयोग पर आधारित है, जिनका आकार कुछ 100 या 10 परमाणुओं के जितना होता है। उदाहरणत: 10 हाइड्रोजन अणुओं का आकार एक नैनोमीटर होता है। आकार के इस पैमाने पर पदार्थ स्थूल रूप से भिन्न होता है। इसके रासायनिक, जीव विज्ञानीय, विद्युतीय, चुम्बकीय और अन्य गुण स्थूल पदार्थो के गुणों से बहुत भिन्न होते हैं। यह सर्वविदित है कि सभी पदार्थ परमाणुओं से मिलकर बने हैं तथा पदार्थ के गुण इस तथ्य पर निर्भर करते हैं कि उसमें परमाणु किस प्रकार व्यवस्थित हैं। उदाहरणत: कार्बन एक तरह से जमाने पर कोयला है तो दूसरी तरह से

जमाने पर वही हीरा बन जाता है (चित्र : 1) :

चित्र 1 : कार्बन व हीरा

अत: सूक्ष्म स्तर पर मनचाहे ढंग से पदार्थो को व्यवस्थित कर उनका वृहद उपयोग किया जा सकता है। नैनोप्रौद्योगिकी हमारे दैनिक जीवन में आने वाली अगली क्रांति है। जीवन का शायद ही ऐसा कोई पहलू है जिसमें नैनोप्रौद्योगिकी का कोई प्रभाव नहीं है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में नैनोप्रौद्योगिकी की उपादेयता निम्न क्षेत्रों में अधिक है :

1. कृषि एवं पर्यावरण
2. चिकित्सा एवं स्वास्थ्य
3. ऊर्जा
4. पेयजल
5. संचार
6. रक्षा इत्यादि

वैज्ञानिकों के अनुसार नैनो पदार्थो को चिरसम्मत भौतिकी के नियमों से पूर्णत: समझ पाना संभव नहीं है। वस्तुत: इस संसार को संभवत: क्वांटम भौतिकी तथा चिरसम्मत भौतिकी के नियमों से समझा जा सकता है। नैनो पदार्थो की क्षमता और संरचना को जानने के लिए प्रकृति से प्रेरणा ली जा सकती है। प्रकृति में पाए जाने वाले एक विषाणु का आकार कुछ नैनोमीटर होता है, परंतु विषाणु में स्वयं की प्रतिकृति का तीव्र गति से उत्पादन करने की क्षमता होती है। विषाणु मनुष्य के स्वास्थ्य को क्या हानि पहुँचा सकता है, इससे हम भली–भाँति परिचित हैं। यदि हम भौतिक विज्ञान की दृष्टि से देखें तो यह कुछ अणुओं एवं परमाणुओं का समूह मात्र है जो एक प्रकार की व्यवस्था में संयोजित है।

कैसे बनाए जाते हैं ये सूक्ष्म पदार्थ ?

वर्तमान में वैज्ञानिक पद्धत्तियों में पदार्थों को दो तरह से संश्लेषित किया जा सकता है :

(1) टॉप डाउन पद्धति (बड़े से छोटे की ओर)

(2) बॉटम अप पद्धति (छोटे से बड़े की ओर)

प्रथम पद्धत्ति के अनुसार स्थूल आकार को तब तक छोटा किया जा सकता है जब तक कि उसमें निर्दिष्ट क्रिया की सीमा न आ जाए। इसके विपरीत, दूसरी पद्धत्ति में सूक्ष्तम मौलिक इकाइयों को जोड़कर बड़ी संरचनाएं बनाई जाती हैं, जैसे कि मौलिक इकाई ईंट को एक–एक जोड़ कर दीवार बनाई जाती है।

प्रथम पद्धत्ति द्वारा स्थूल पदार्थों को एक सीमा तक ही छोटा किया जा सकता है। अत: वैज्ञानिक प्रकृति की स्व-समायोजन प्रणाली (बॉटम अप क्षमता) को अपनाकर अभिनव संरचनाओं को बनाने का प्रयास कर रहे हैं। स्व-समायोजन का सबसे श्रेष्ठ उदाहरण प्रकृति में ही देखा व सराहा जा सकता है जैसे कि हमारी अस्थियाँ, जो अकार्बनिक हाइड्रोक्सी एपाटाईट तथा कार्बनिक कोलोजन की मेट्रिक्स से बनती हैं। यदि हम कृत्रिम रूप से मनुष्य के मस्तिष्क के समान आण्विक कम्प्युटर का निर्माण कर सकें तो यह मानव समाज के लिए एक अद्वितिय उपयोगी भेंट होगी और यह सब संभव हो सकता है – सूक्ष्म स्तर पर अणुओं/परमाणुओं की व्यवस्था को नियंत्रित करके।

कैसे विश्लेषण एवं नियंत्रित किया जाता है सूक्ष्म कणों को?

नैनोविज्ञान में क्रांति का मुख्य कारण ऐसे उपकरणों का उपलब्ध होना है जिनसे अणुओं/परमाणुओं संरचनायों को देखा व नियंत्रित किया जा सकता हैं। इस आयाम में सर्वप्रथम स्केनिंग यानि क्रमवीक्षण विश्लेषक यंत्र का आगमन हुआ था। यह यंत्र ठीक हमारी अंगुली की तरह अपने तथ्य पर फिसलता हुआ उसकी जानकारी दर्ज करता रहता है। अन्य यंत्र जो पदार्थों के नैनो मापन विश्लेषण में अति महत्वपूर्ण हैं तथा उपयोगी जानकारी प्रदान करते हैं, निम्नलिखित हैं :

(1) एक्स-रे पाउडर विवर्तन (एक्स आर डी): यह यंत्र मुख्य रूप से पदार्थ के चरण की पहचान के लिए इस्तेमाल किया जाता है ।

(2) संचरण इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी (टी ई एम): यह सूक्ष्म कणों की स्थलोंति, रूपिम, संरचनात्मक

और क्रिस्टलीय जानकारी प्रदान करता है ।

(3) पराबेंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रोस्कोपी

(4) फुरियर-रूपान्तरण इन्फ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी (एफ टी आई आर स्पेक्ट्रोस्कोपी)

(5) परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रोस्कोपी (ए ए एस)

(6) थर्मल विश्लेषण

चित्र 2 : एक्स-रे पाउडर विवर्तन

चित्र 3 : संचरण इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी

चित्र 4 : पराबेंगनी-दृश्य स्पेक्ट्रोस्कोपी

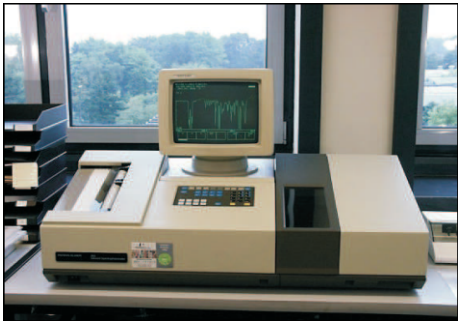

चित्र 5 : एफटीआइआर स्पेक्ट्रोस्कोपी

चित्र 6 : परमाणु अवशोषण स्पेक्ट्रोस्कोप

चित्र 7 : थर्मल विश्लेषण

नैनोप्रौद्योगिकी की विविध क्षेत्रों में उपयोगिता :

नैनोप्रौद्योगिकी ने हर संभावित क्षेत्र को छुआ है चाहे वह जल, वायु, मृदा या अंतरिक्ष हो या रोजमर्रा की उपयोगी वस्तुएं।

(1) कृषि के क्षेत्र में यह प्रौद्योगिकी एक नई क्रांति, जिसे कि द्वितीय क्रांति भी माना जा रहा है, ला सकती है। सूक्ष्म पदार्थो से ऐसे कृषि उपकरण एवं संवेदकों (सेंसर) का भी विकास किया जाना संभव है जिनकी सहायता से कृषि उत्पादन को बढ़ावा दिया जा सकता है। नैनो आधारित उर्वरक एवं कीटनाशकों का निर्माण भी संभव है, जिनसे मानव एवं अन्य जैव तंत्र पर पड़ने वाले कुप्रभावों से बचा जा सकता है।

(2) चिकित्सा के क्षेत्र में नैनोप्रोद्योगिकी का संभावित प्रयोग बीमारियों का प्रारम्भिक अवस्था में पता लगाने से लेकर उपचार में काम आने वाली नैनो आधारित दवाइयों के निर्माण में है। उदाहरणत: नैनो ट्यूब, एक अत्यन्त सूक्ष्म नलिका के माध्यम से दवा को शरीर के किसी भी अंग तक आसानी से सही मात्र में पहुंचाया जा सकता है। विशेष प्रकार के कणों को (स्वर्ण धातु आधारित) कैंसर के इलाज के लिए भी प्रयुक्त किया जा रहा है।

(3) नैनोप्रौद्योगिकी द्वारा ऐसे विशेष फिल्टरों का निर्माण भी किया जा सकता है जिनके छिद्रों को आवश्यकतानुसार 1 से 100 नैनोमीटर तक बदला जा सकता है। ये फिल्टर न केवल पेट्रोल, डीजल से अपितु हवा, पानी से भी संदूषक को दूर करने में सहायक हैं।

(4) नैनोप्रौद्योगिकी से माइक्रोप्रोसेसर एवं अन्य अर्ध-चालक युक्तियों का आकार 10 लाख गुना छोटे होने की संभावना है और इसमें ऊर्जा की खपत में भी काफी कमी आएगी। नैनोप्रौद्योगिकी समन्वित परिपथों के सूक्ष्मीकरण की प्रक्रिया में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

(5) इसके अलावा ऊर्जा क्षेत्र, रक्षा क्षेत्र और संचार क्षेत्र में भी इसके अनगिनत उपयोग हैं। वर्तमान में नैनो संरूपण जैसे कि टाइटेनियम डाइऑक्साइड का प्रयोग सौंदर्य प्रसाधनों, क्रीम तथा लोशन में किया जाता है, जो अधिक टिकाऊ होते हैं। खोजकर्ताओं ने ऐसी टाइलें तैयार की हैं जिन पर धूल, चिकनाई, गंदगी आदि नहीं बैठ पाती है। ऐसे ही अनेकानेक क्षेत्रों में नैनोप्रोद्योगिकी ने अपनी उपस्थिती दर्ज की है।

भारतीय परिदृश्य में नैनोप्रोद्योगिकी :

भारत में सूचना क्रांति एवं हरित क्रांति ने भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में मुख्य भूमिका निभाई है। वर्तमान युग वैज्ञानिक क्रांति पर निर्भर है जिसमें नैनोप्रौद्योगिकी काफी अहम भूमिका निभा सकती है। नैनोप्रोद्योगिकी हर संभव क्षेत्र में क्रांति लाने में सक्षम है, जिसमे से मुख्यत: कृषि, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा, ऊर्जा एवं पर्यावरण क्षेत्र भारतीय परिप्रेक्ष्य में महत्तवपूर्ण हैं।

भारत एक कृषि प्रधान देश के रूप में जाना जाता है और कृषि क्षेत्र के वैज्ञानिकों को आशा है नैनोप्रोद्योगिकी इस क्षेत्र में काफी योगदान देने वाली है। इससे पादप, मिट्टी और पशुधन सुरक्षा सुधार लाए जा सकते है। इसके द्वारा जल से कम कीमत में हाइड्रोजन प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा सूक्ष्म, तेज, संवेदनशील एवं पोर्टेबल संवेदक का विकास किया जा सकता है, जो खाद्य एवं पादप सुरक्षा में सहायक हो सकते हैं।

इसके अलावा इलेक्ट्रोनिक परिपथों का उत्पादन संभव हो पाएगा एवं कम्प्यूटरों का आकार पिन की नोक के बराबर छोटा हो जाएगा। आज जिस तरह कम्प्युटर के पदार्पण से पूरे विश्व मे क्रांति आ चुकी है उसी प्रकार नैनोप्रौद्योगिकी भी एक नैनो क्रांति को जन्म देगी।

सीएसआइओ का नैनोप्रौद्योगिकी क्षेत्र में योगदान

सीएसआइओ सक्रिय रूप से नैनोविज्ञान एवं नैनोप्रौद्योगिकी का प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में कर रहा है। कुछ संक्षिप्त गतिविधियां इस प्रकार हैं :

नैनोमैटिरियल आधारित संवेदक : संवेदक (जिसे डिटेक्टर भी कहा जाता है) एक एक कनवर्टर है जो भौतिक मात्रा को एक संकेत में धर्मान्तरित करता है, जो कि एक पर्यवेक्षक के द्वारा या एक (आज ज्यादातर इलेक्ट्रॉनिक) साधन के द्वारा पढ़ा जा सकता है। अधिकतर संवेदको की क्षमता पदार्थ के गुणधर्मो पर निर्भर है, पर पदार्थ स्थूल रूप से भिन्न होता है। यह सर्वविदित है कि आकार के इस पैमाने पर आकर पदार्थो के रासायनिक, जीव विज्ञानीय, विद्युतीय, चुम्बकीय और अन्य गुण बहुत भिन्न होते है । अत: इनकी संवेदन क्षमता अधिक पायी जाती है। सीएसआइओ के शोध समूहो ऐसे ही अनेक materials को संवेदक की भाँति प्रयोग कर रहे हैं, उदाहरणत:

1. सिलिका/सिल्वर/गोल्ड नैनोकॉम्पोज़ीट आधारित संवेदक : नाइट्रोबैज़ीन एवं कीटनाशकों की जाँच के लिए।
2. CdS/Cde एवं सचालक पोलिमर आधारित संवेदक : फलों के रस में पोलिफीनोल का पता लगाने एवं मात्रा बताने के लिए।
3. Metal Organic frame Work आधारित संवेदक : रोगजनकों का पता लगाने के लिए।
4. SnO2/ZnO आधारित संवेदक : अल्कोहल वाष्पकणों एवं पोलिफीनोल जाँच के लिए इत्यादि।
5. नैनोकोटिंग्स : कोटिंग्स, जिनकी मोटाई नैनो या परमाणु पैमाने पर नियंत्रित होती हैं।

सीएसआइओ इस क्षेत्र में भी काफी कार्य कर रहा है,

- प्रत्यारोपण के उपकरणों पर नैनोसिल्वर कोटिंग्स
- अत्यधिक कुशल Antireflection सतहो का विकास
- फोटोनिक्स/प्लाज़्मोनिश्स आधारित नयी कोटिंग तकनीकी का विकास इत्यादि।

इसी प्रकार ननोमटेरियल्स अन्य क्षेत्रों में भी प्रयोग में लाये जा रहे हैं, उदाहरणतः सुरक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, ऑप्टिक्स, चिकित्सा इत्यादि

अंत में, यह तो सबको ज्ञात ही है कि सिक्के के दो पहलू होते है, उसी तरह हर नया आविष्कार या क्रांति अपने साथ जुड़े लाभ तथा हानि साथ लेकर आता है। नैनोप्रौद्योगिकी भी फ़ायदों के साथ-साथ कुछ खतरे भी सँजोए हुए है। नैनोप्रौद्योगिकी का विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग कर हम मानव जाति का कल्याण करने के लिए इसका सही तरह से इस्तेमाल कर सकते हैं।
किसी महान वैज्ञानिक ने सही कहा था "There is plenty of room at the bottom" इस रूम को एक्सप्लोर करके तथा इन सूक्ष्मकणों की असीमित शक्तियों को मानव विकास में उपयोग इस धरा को स्वर्ग जैसा सुन्दर बना सकता है।

संकलन : मनीष कुमार एवं पूजा देवी
सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

विकिरण विधि द्वारा कैंसर रोग निवारण

कैंसर रोग शब्द सिर्फ एक बीमारी को नहीं अपितु 200 से अधिक प्रकार के विकारों को अभिव्यक्त करने के लिए प्रयोग होता है। प्रत्येक विकृत कोशिका की प्रचुर मात्रा में असामान्य तथा अनियन्त्रित वृद्धि और विभाजन से इसकी पहचान की जाती है। इन कोशिकाओं की इस अनियन्त्रित वृद्धि से ट्यूमर बनते हैं जो कि स्वस्थ उत्तक और उनके आस-पास के वातावरण में तेज़ी से फैलते है जिनके फलस्वरूप कैंसर कोशिकाएं अपने प्राथमिक ट्यूमर से अलग होकर विभिन्न ऊत्तकों तथा शरीर के संचार माध्यमों से विभिन्न भागों में पहुँचती हैं तथा वहाँ पर नई कैंसर कोशिकाओं का निर्माण करती हैं । मानव इतिहास में प्रारम्भ से ही विभिन्न प्रकार के कैंसर तथा उसके दुष्प्रभाव दिखाई देते रहे हैं।

कैंसर विश्व में सबसे अधिक फैली हुई बीमारियों में से एक है तथा भारत में भी सबसे अधिक मृत्यु कैंसर की वजह से ही होती है। ऐसा अनुमान है कि इस समय 20 से 25 लाख लोग कैंसर से पीड़ित हैं तथा प्रतिवर्ष 7 लाख कैंसर पीड़ित लोग उपचार के लिए आते हैं । पुरुषों में मुँह का कैंसर, गले का कैंसर, आमाशय का कैंसर तथा महिलाओं में गर्भाशय, स्तन तथा मुँह के कैंसर सबसे अधिक फैलने वाले कैंसर रोगों में से हैं। भारत में होने वाली आधी से ज्यादा मृत्यु कैंसर के कारण होती हैं।

कैंसर उपचार के तरीके:-

कैंसर के उपचार में तीन मुख्य विधियां प्रयोग में लाई जाती हैं, वे इस प्रकार हैं:

- शल्य चिकित्सा या सर्जरी
- रसायन चिकित्सा अथवा कीमोथैरेपी
- विकिरण चिकित्सा विधि

यह लेख मुख्यत: विकिरण विधि द्वारा कैंसर के उपचार को प्रस्तुत करता है ।

विकिरण पद्धति:- इस विधि में अधिक ऊर्जा वाली किरणों का प्रयोग कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करने के लिए किया जाता है। लगभग 60 वर्ष से अधिक आयु के कैंसर रोगियों की पीड़ा को कम

करने के लिए मुख्यत: इसी विधि का प्रयोग किया जाता है। प्रभावी तथा किफायती इलाज के लिए विकिरण विधि प्राय: अकेले या सर्जरी के साथ उपचार के लिए प्रयुक्त की जाती है। इसी कारण कैंसर उपचार के लिए इस विधि की गणना मुख्य विधियों में होती है। उपचार के लिए अधिक ऊर्जा वाली किरणें या तो रेडियोएक्टिव स्रोत कोबाल्ट-60 से उत्पन्न की जाती हैं या लाइनेक से। यद्यपि रेडियोएक्टिव तथा अन्य विकिरण विधियां कैंसर उपचार में प्रयुक्त होती हैं परन्तु लाइनेक द्वारा विकिरण उपचार रेडियोएक्टिव उपचार की तुलना में अधिक सटीक, अधिक प्रभावी, अधिक गहराई तक तथा अधिक सुरक्षित प्रमाणित हुआ है। इन्हीं कारणों से यह विधि अन्य विधियों की तुलना में अधिक प्रयोग की जाने लगी है । रेडियोएक्टिविटि तथा उनके नियंत्रण जैसे खतरों के कारण कोबाल्ट-60 की मशीनें विकसित देशों से लगभग विलुप्त हो चुकी हैं तथा इनके स्थान पर लाइनेक को प्रमुखता दी जा रही है। आधुनिक लाइनेक में उच्च ऊर्जा की एक्सरे किरणें लाइनेक ट्यूब द्वारा सटीकता तथा सुचारू रूप से उत्पन्न की जाती हैं।

लाइनेक के प्रमुख अंग :- चित्र 1 में लाइनेक के प्रमुख भागों को दर्शाया गया है तथा चित्र दो 2)में 6 मेगावोल्ट ऊर्जा के लाइनेक को दिखाया गया है जिसे सी एस आई ओ (चण्डीगढ़) तथा समीर मुम्बई द्वारा आपसी सहयोग से विकसित किया गया है ।

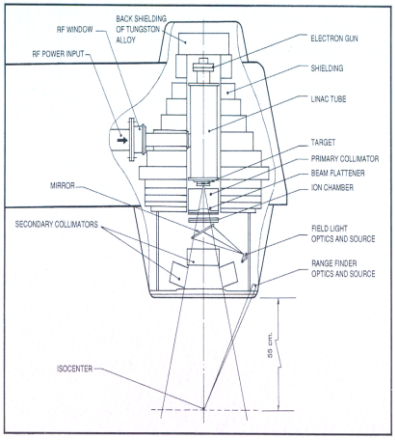

चित्र 1: लाइनेक के प्रमुख भाग

चित्र 2 : सीएसआईआर-सीएसआइओ एवं समीर द्वारा विकसित 6 मेगावोल्ट मेडिकल लाइनेक

लाइनेक ट्यूब :- 6 मेगावोल्ट ऊर्जा तथा 240 रेडियेशन/मिनट को उत्पन्न करने के लिए मेंगनेट्रान से 104 एम्पियर की करन्ट धारा को 190 पल्स रोटेशन आवृत्ति से उत्पन्न किया जाता है । आवश्यक ऊर्जा के वितरण के लिए लाइनेक ट्यूब को निर्धारित सीमा के नीचे ही प्रयोग किया जाता है । चित्र 3 में 6 मेगावोल्ट लाइनेक के लिए प्रयोग की गई ट्यूब को दिखाया गया है ।

चित्र 3 : 6 मेगावोल्ट मैडिकल लाइनेक ट्यूब

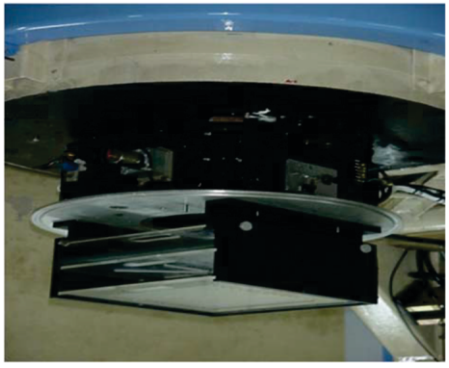

चित्र 4 : कोलिमेटर

किरणों का समानान्तरण :- समानान्तरण पूर्णतया मोटर चालित होता है । 35x35 सभी के बीच में समकेन्द्र पर स्थापित होता है जो कि विकिरण अक्ष पर घूम सकता है। चित्र 4 में 6 मेगावोल्ट लाइनेक में प्रयुक्त समानान्तर को दिखाया गया है ।

चित्र 5 : पेशेंट काउच

चित्र 6 : नियन्त्रण कन्सोल

पेशेंट काउच :- रोगी के लेटने की जगह पूर्णत: कम्प्यूटर नियन्त्रित तथा कार्बन फाइबर से बनी होती है । तेज तथा सटीक निर्धारण के लिए पलंग के 5 प्रमुख दिशाओं में मूवमेंट होते हैं 270° का

अक्ष पर घुमाव, समकेन्द्र पर घुमाव ±145° अक्षीय तथा लम्ब दिशाओं में गति तथा घुमाव दोनो जो कि इलेक्ट्रोमैग्नेटिक विधि द्वारा नियन्त्रित होते हैं । इसे चित्र 5 में दिखाया गया है ।

नियन्त्रन प्रणाली :- नियन्त्रन प्रणाली का प्रयोग विभिन्न दिशाओं में आवश्यकतानुसार किया जाता है । इसके प्रमुख भाग :-

- मुख्य नियन्त्रन कक्ष में स्थापित पूर्णत: कम्पूटरीकृत मेज़
- उपचार कक्ष में स्थापित मानव नियन्त्रक
- मुख्य विकिरण निर्धारक
- पलंग के दोनों तरफ उपस्थित पलंग के नियन्त्रक

6 मेगावोल्ट लाइनेक की प्रणाली चित्र 6 में दर्शायी गई है।

लाइनेक में प्रयुक्त प्रकाशीय प्रणाली :- मुख्यत: दो प्रकार की प्रकाशीय प्रणालियां लाइनेक में प्रयोग की गयी हैं ।

1 **क्षेत्रीय प्रकाशीय प्रणाली :-** इसका प्रयोग एक्स-रे के संगठन तथा उपचार से पहले रोगी के उपचार क्षेत्र निर्धारण में होता है। प्रोजेक्टेड प्रकाश तथा एक्स-रे किरणों के समानान्तरण को ही एक्स-रे किरणों का संगठन कहा जाता है। इसे चित्र 7 में प्रस्तुत किया गया है ।

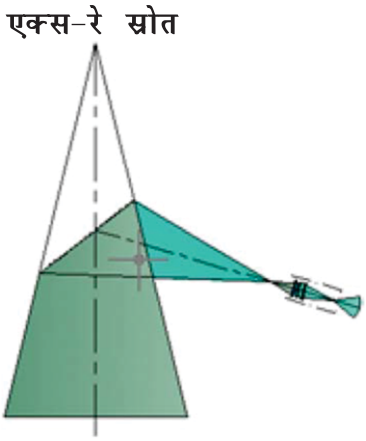

चित्र 7 : प्रकाशकीय क्षेत्र का प्रारूप

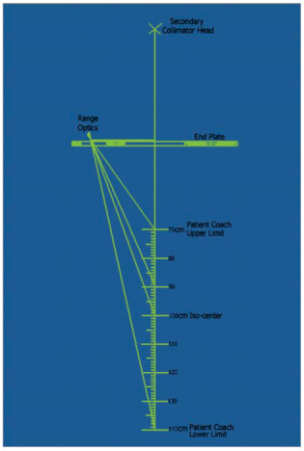

चित्र 8 : प्रकाशिकी-दूरी सूचक का प्रारूप

2 **प्रकाशीय दूरी निदेशक :-** यह उपचार केन्द्र के अन्दर स्थापित होता है तथा रोग के उपचार के सुविधाजनक स्थान निर्धारित करने में सहायता करता है । इसका मुख्य कार्य स्रोत से रोगी की त्वचा के बीच की दूरी का निर्धारण है जोकि प्राय: 70 सेमी से 140 सेमी के बीच होती है । इसे चित्र 8 में दर्शाया गया है ।

उपसंहार: 6 मेगावोल्ट ऊर्जा वाले लाइनेक का विकास तथा स्थापना प्रगतिशील प्रौद्योगिकी के स्वदेशीकरण का एक सफल प्रयास है । राष्ट्रीय आवश्यकताओं की आपूर्ति तथा व्यावसायिक उत्पादन के लिए एक निजी उत्पादक को इसकी तकनीक प्रदान की जाएगी ।

संकलन : डा०जी०एस०सिंह

सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

एनस्थीसिया

एनस्थीसिया शब्द सुनने पर जो पहला विचार हमारे मन में आता है, वह शल्य चिकित्सा अर्थात् ऑप्रेशन से संबंधित होता है। एनस्थीसिया शब्द दो ग्रीक शब्दों के संयोजन से बना है जिसमें 'एन' का अर्थ है बिना और 'एस्थेसिस' से तात्पर्य है संज्ञा शून्यता। यदि दोनों शब्दों का संयोजन किया जाए तो एनस्थीसिया का अर्थ हुआ लॉस ऑफ सेन्सेशन। एनस्थीसिया की व्यापक परिभाषा की जाए तो एनस्थीसिया से तात्पर्य ऑप्रेशन के दौरान संवेदन-शक्ति का खोना होता है। प्राचीन काल में शल्य चिकित्सा की प्रक्रिया के दौरान चार-पाँच पहलवान रोगी को पकड़ कर रखते थे ताकि रोगी हिले नहीं और शल्य चिकित्सा पूरी की जा सके, विशेष रूप से दुर्घटनाग्रस्त रोगी, जहाँ और कोई चारा नहीं होता था। आज के दौर में एनस्थीसिया शल्यचिकित्सा का एक महत्त्वपूर्ण अंग है जिसके बिना शल्यचिकित्सा की प्रकिया पूरी नहीं की जा सकती। एनस्थीसिया प्रक्रिया विभिन्न दवाओं का संयोजन है जिससे रोगी शल्यचिकित्सा के दौरान और बाद में होने वाली पीड़ा को कम सें कमतर महसूस करता है।

संतुलित एनस्थीसिया के चार बुनियादी घटक हैं:

1 **सम्मोहन :** अचेतन अवस्था यानि शल्यचिकित्सा के दौरान मरीज़ का कृत्रिम निद्रावस्था में होना।।
2 **स्मृतिलोप :** अस्थायी रूप से स्मृति का खोना यानि रोगी को शल्यचिकित्सा के दौरान हुई प्रक्रिया के बारे में कुछ भी याद न रहना।
3 **एनल्जिसिया :** व्यथा का अभाव यानि शल्यचिकित्सा के दौरान रोगी को बिल्कुल दर्द महसूस न होना।
4 **गतिहीनता :** मोटर सजगता की हानि यानि शल्यचिकित्सा के दौरान मरीज़ का हिलने की स्थिति में न होना।

एन्स्थोलोजिस्ट (विशेषज्ञ चिकित्सक) सभी घटकों या एनस्थीसिया के प्रकार के आधार पर एक या एक से अधिक घटकों को नियंत्रित करता है।

एनस्थीसिया तीन प्रकार के होते हैं :

1 स्थानीय (लोकल एनस्थीसिया)
2 क्षेत्रीय (रीजनल एनस्थीसिया)
3 पूर्ण (जनरल एनस्थीसिया)

स्थानीय एनस्थीसिया

स्थानीय एनस्थीसिया में औषधि शरीर के किसी एक अंग के विशेष स्थान पर दर्द की अनुभूति को रोकती है। इसमें रोगी सचेत होता है, जैसे कि दन्त शल्यचिकित्सा के दौरान स्थानीय एनस्थीसिया दिया जाता है जो कि अल्पावधि होता है। इसमें रोगी उपचार के बाद तुरंत घर जा सकता है।

क्षेत्रीय एनस्थीसिया

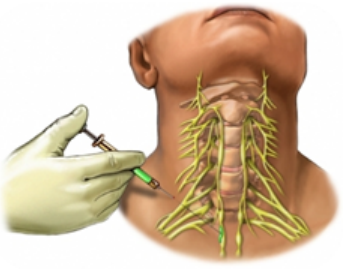

क्षेत्रीय एनस्थीसिया स्थानीय एनस्थीसिया का अगला चरण है। क्षेत्रीय एनस्थीसिया का उद्देश्य दर्द की अनुभूति को शरीर के बड़े क्षेत्र में उत्पन्न होने से रोकना है, जैसे कि टाँग, बाजू, हाथ और पैर की शल्यचिकित्सा के दौरान इसका प्रयोग प्राय: होता है। इसमें रोगी सचेत अवस्था में होता है लेकिन हिलडुल नहीं सकता। इसमें चिकित्सा के कम-से-कम दो घटकों को नियंत्रित किया जाना है।

पूर्ण एनस्थीसिया

पूर्ण एनस्थीसिया अपने चारों घटकों सम्मोहन, स्मृतिलोप, एनल्जीसिया और गतिहीनता के संतुलित एनस्थीसिया को सम्मिलित करता है जिससे कि मरीज़ शल्यचिकित्सा के दौरान होने वाली किसी भी गतिविधि से अनभिज्ञ रहता है। पूर्ण एनस्थीसिया अन्त:शिरा इंट्रा-वीनस, जो कि आमतौर पर नस के बीच बाज़ू पर लगी सुई के द्वारा) या अन्त:श्वसन के माध्यम से दिया जाता है। एनस्थीसिया औषधि अन्त:शिरा प्रक्रिया में पम्प(ड्रग इन्फ्यूज़न पम्प) के माध्यम से दी जाती है और अन्त:श्वसन प्रक्रिया में एनस्थीसिया दवा वायुयंत्र (एनेस्थीसिया वेंटिलेटर) के द्वारा मुखौटे या ट्यूब के माध्यम से दी जाती है। एनस्थीसिया वायुयंत्र का प्रयोग संवेदनहारणी गैसों के प्रसार एवं मरीज़ की श्वास प्रणाली को सहयोग देने के लिए किया जाता है। एन्स्थॉलोजिस्ट शल्य प्रक्रिया से पहले, दौरान और बाद में हमेशा मरीज़ की जाँच के लिए साथ रहकर यह सुनिश्चित करता है कि मरीज़ को दवा की सही मात्रा सही समय पर मिलती रहे।

संतुलित एन्स्थीसिया

रोगी की संतुलित एनस्थीसिया अवस्था प्राप्त करने के लिए ऊपर दिए गए चारों घटकों को बेहतरीन तरीके से नियंत्रित किया जाना होता है जिसके लिए एन्स्थॉलोजिस्ट मरीज़ को दी जाने वाली दवाई की तब तक निगरानी करते हैं जब तक कि मरीज़ संतुलित एनस्थीसिया स्थिति में नहीं पहुँचता। एनस्थीसिया निगरानी और नियंत्रण की माँग करने वाला गंभीर कार्य है, एन्स्थॉलोजिस्ट ऑप्रेशन के दौरान मरीज़ की बेहोशी की गहराई का अनुमान उसकी शारीरिक हिलडुल और नैदानिक यानि हृदय गति, रक्तचाप, शारीरिक द्रव्यों के मापन से लगाता है। फिर भी कई बार पाया गया है कि मरीज़ को शल्यचिकित्सा के दौरान हुई पीड़ा का स्पष्ट स्मृति आभास रहता है परन्तु वह गतिहीनता के कारण उसे व्यक्त करने में असमर्थ रहता है जो कि उसके जीवन का सबसे पीड़ादायी अनुभव होता है। यह स्थिति कभी-कभी स्मृतिलोप को नियंत्रित करने वाली दवा की मात्रा अपर्याप्त होने के कारण आ सकती है।

अध्ययनों के आधार पर एनस्थीसिया के निम्नानुसार कई सूचकांक उपलब्ध हैं:

1 बीआइएस मॉनिटर:

यह एक न्यूरॉलोजिकल निगरानी उपकरण (एस्पेक्ट मेडिकेयर सिस्टम) है जो कि सामान्य एनस्थीसिया के दौरान चेतना स्तर का मूल्यांकन करने के लिए लगातार माथे से लिए गए इलैक्ट्रोएन्सिफेलोग्राम (ई0 ई0 जी0) सिग्नल का विश्लेषण करता है। ई0 ई0 जी0 सिग्नल दिमाग में होने वाली अलग-अलग गतिविधियों के कारण उत्पन्न होता है जिसका विश्लेषण कर यह उपकरण एक संख्या द्वारा 0-100 रोगी की सचेत अवस्था को दर्शाता है कि रोगी कितना जागा हुआ है अथवा कितना निद्रा में है। जब रोगी जाग रहा होता है तो यह उपकरण शून्य की ओर संकेत दिखाता है।

2 एंट्रोपी मॉनिटर :

यह डेटेक्स ओहेमडा द्वारा विकसित किया गया न्युरॉलोजिकल निगरानी उपकरण है जो कि माथे से लिए गए ई0 ई0 जी0 सिग्नल के विश्लेषण के द्वारा एनस्थीसिया के दौरान चेतना स्तर का मूल्यांकन करता है। रोगी के मस्तिष्क द्वारा की गई क्रिया का मूल्यांकन जागरूक चेतना की सम्भावना

को एक संख्या (0-100) के रूप में दर्शाता है कि रोगी कितना जागा हुआ अथवा कितना नींद में है।

इस प्रकार के कई उपकरण बाज़ार में उपलब्ध हैं। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि मॉनिटर द्वारा दर्ज की गई गतिविधियाँ मस्तिष्क के एक ही स्थान से ली गई हैं, ये सब मॉनिटर रोगी की सिर्फ नींद की अवस्था का वर्णन करते हैं लेकिन उनमें से कोई भी संतुलित एनस्थीसिया के विभिन्न घटकों के लिए विभिन्न सूचकाँक नहीं बताता, उपलब्ध सूचकाँक एन्स्थॉलोजिस्ट को केवल गाइड करता है। एनस्थॉलोजिस्ट अभी भी रोगी में एनस्थीसिया के विभिन्न घटकों का पूर्वानुमान लगाने में पूरी तरह से सक्षम नहीं है जिससे वे कई बार रोगी को संतुलित एनस्थीसिया प्रदान करने में असमर्थ रहते हैं। इसीलिए एनस्थीसिया के सभी घटकों के सन्दर्भ में अलग-अलग सूचकाँक के भिन्न प्रभाव के लिए मस्तिष्क की गतिविधियों के अलग-अलग स्थानों से अध्ययन की आवश्यकता है।

चण्डीगढ़ स्थित केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सी एस आई ओ) इन सूचकांकों का अलग-अलग मूल्यांकन करने का प्रयास कर रहा है। इसके लिए बेहोश करने वाली दवाओं की मात्रा को घटा-बढ़ा कर मस्तिष्क के विभिन्न स्थानों से ई0 ई0 जी0 सिग्नल एकत्र किए जा रहे हैं। इस अध्ययन का उद्देश्य एनस्थीसिया के विभिन्न घटकों के लिए विभिन्न सूचकाँकों की गणना करना है ताकि एक एनेस्थेसिस्ट एनस्थीसिया से संबंधित घटकों के मूल्याँकन के आधार पर विभिन्न घटकों का उचित मापन और तदनुसार संबंधित दवा का आकलन करके रोगी को संतुलित एनस्थीसिया की स्थिति में रख सके।

संकलन : सुदेश बाछल, संजीव कुमार एवं आमोद कुमार

सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

विकलांगों के लिए कृत्रिम उपकरण

कोई भी प्रौद्योगिकी अथवा अनुसंधान कार्य अंततः मनुष्य के लाभार्थ ही होता है परन्तु इसका जन-साधारण के साथ प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष जुड़ाव इसके महत्त्व को निर्धारित करता है। आज के उपभोक्तावादी युग में वही प्रौद्योगिकी अथवा अनुसंधान सार्थक माना जाता है, जो जन-साधारण के लिए अधिकाधिक उपयोगी हो और जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाए।

सीएसआइओ के चिकित्सा उपकरणविन्यास प्रभाग के अंतर्गत कुछ ऐसे ही उपकरणों और प्रौद्योगिकियों का विकास किया गया है। यहाँ विकसित की गई प्रौद्योगिकियां विकलांगों को सामान्य जीवन जीने में सहायता देती हैं, जिससे समाज के शारीरिक रूप से प्रभावित लोग भरपूर लाभ उठा सकते हैं और सामान्य जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

इस प्रभाग के प्रौस्थैटिक डिवाइसिस प्रोग्राम के अंतर्गत विकलांगों के लिए बनाए गए मायोइलैक्ट्रिक हाथ एवं कृत्रिम इलेक्ट्रॉनिक घुटना मुख्य हैं।

मायोइलैक्ट्रिक हाथ

मायोइलैक्ट्रिक हाथ अंग कटे हुए विकलांगों के लिए पुनर्वास प्रदान करने वाला एक कृत्रिम हाथ है।

यह एक प्राकृतिक हाथ के समान काम करता है। जब एक स्वस्थ व्यक्ति अपना हाथ खोलता और बंद करता है तो हाथ की मांसपेशियों में संकुचन एवं विश्राम के कारण बिजली का एक संकेत उत्पन्न होता है इस सिग्नल को ईएमजी कहते हैं। ऐसा ही कटे हुए हाथ वाले व्यक्ति के अवशिष्ट अंग के साथ भी होता है, यदि उसकी मांसपेशियां सक्रिय हैं। इन अवशिष्ट मांसपेशियों के ऊपर इलेक्ट्रोड लगाकर संकुचन व विश्राम के द्वारा उत्पन्न सिग्नल को पकड़ा जा सकता है। सीएसआइओ द्वारा विकसित कृत्रिम हाथ में इस संकेत को प्रसंस्कृत करके एक मोटर को हाथ बंद करने अथवा खोलने के लिए प्रेरित किया जाता है। इस यांत्रिक हाथ में उंगलियाँ, हथेली, कलाई और कोहिनी के ऊपर के भाग शामिल हैं।

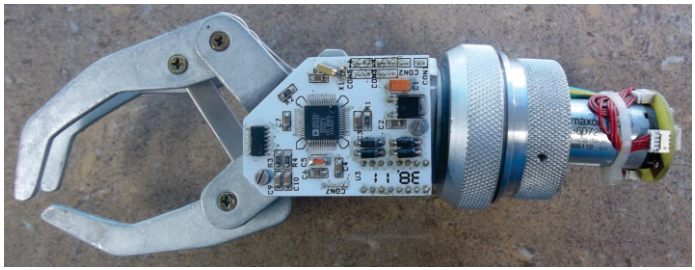

इस हाथ की विशेषता है कि हाथ की पकड़ की मज़बूती को व्यक्ति अपनी इच्छानुसार नियंत्रित कर सकता है। कोहिनी के ऊपर के भाग को संचालित करने के लिए पुश बटन प्रकार के दो स्विच प्रयोग किए जाते हैं। एक यांत्रिक छड़ और दो ऑप्टो स्विच कोहनी के विस्तार की अधिकतम सीमा को पारिभाषित करते हैं। हाथ की कार्यक्षमता को समझने तथा उसे अपने अनुरूप कार्य कराने के लिए व्यक्ति को एक प्रशिक्षण कार्यक्रम की आवश्यकता होती है।

व्यक्ति यदि किसी हल्की वस्तु को उठाता है तो उस समय उसकी माँसपेशियों में संकुचन कम होता है। फलस्वरूप उठाए गए ईएमजी सिग्नल का मान भी कम होगा। प्रसंस्कृत करने के बाद मोटर (हाथ को खोलने-बंद करने वाली) में विद्युत धारा भी उसी अनुपात में कम प्रवाहित की जाती है और मोटर कम घूर्णन बल पैदा करती है। ऐसी स्थिति में मोटर की वस्तु पर पकड़ कमज़ोर हो जाती है। भारी वस्तु पकड़ते समय ईएमजी सिग्नल का मान अधिक होता है और फलतः मोटर वस्तु को अधिक कस कर पकड़ती है।

कृत्रिम इलैक्ट्रॉनिक घुटना

आर्थिक विकास व प्रगति के साथ-साथ जिस प्रकार वाहनों, कारखानों आदि की संख्या बढ़ी है, उसी अनुपात में दुर्घटनाएं भी बढ़ी हैं। इसलिए एक बड़ी आबादी को कृत्रिम अंगों की आवश्यकता होती है। एक सामान्य कृत्रिम पाँव घुटने से ऊपर अपाहिज लोगों को केवल खड़े रहने अथवा सीमित चलने-फिरने में सहायता कर सकता है परंतु इससे उनकी चाल में स्थिरता नहीं आती जोकि भविष्य में जोड़ों की अन्य समस्याओं का कारण बन सकती है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर हमने एक ऐसा कृत्रिम इलैक्ट्रॉनिक घुटना विकसित किया है जो रोगी को न केवल सामान्य तरीके से चलने में सहायता करे बल्कि उसकी चाल में संतुलन व स्थिरता भी प्रदान करे। इस घुटने के विकास के लिए

सामान्य व्यक्तियों की चाल के अध्ययन के द्वारा नियंत्रक सूचक निर्धारित किए गए जिनके आधार पर इसकी नियंत्रण प्रणाली के हार्डवेयर एवं सॉफ्टवेयर का निर्माण किया गया। इसकी नियंत्रण प्रणाली में सैंसर्ज़ चाल की गति और स्थिति की जानकारी निरंतर एक माइक्रोकंट्रोलर को प्रदान करते रहते हैं जिनके आधार पर नियंत्रण सॉफ्टवेयर एक न्यूमैटिक सिलेंडर में हवा के प्रवाह को नियंत्रित करता है। हवा के प्रवाह को नियंत्रित करने के लिए न्यूमैटिक सिलेंडर में एक निडिल वाल्व लगा है, इस निडिल वाल्व को एक स्टैपर मोटर द्वारा नियंत्रित कर हवा के प्रवाह मार्ग को छोटा अथवा बड़ा करते हैं। रोगी जैसे ही चलने की प्रक्रिया आरम्भ करता है, नियंत्रण तंत्र सैंसर द्वारा प्रदान सिगनल की मात्रा के अनुपात में वाल्व को रोगी की चाल की गति के अनुसार खोल देता है। इसके अतिरिक्त सिलेण्डर के पिस्टन पर एक स्प्रिंग भी लगाया गया है जो चाल के दौरान घुटने को पुनः सीधा होने के लिए आवश्यक ऊर्जा प्रदान कर चाल को स्थिर रखने में सहायता करता है। इस प्रकार यह नियंत्रण तंत्र चाल की गति को नियंत्रित करते हुए चाल में स्थिरता व संतुलन प्रदान करता है। विकसित कृत्रिम अंग का वज़न लगभग 1600 ग्राम, मुड़ने की क्षमता 60 डिग्री और वज़न सहने की क्षमता लगभग 100 किलोग्राम है।

इस घुटने के विकास का उद्देश्य न केवल रोगी को चाल के अनुसार व्यवस्थित हो सकने वाला कृत्रिम अंग प्रदान करना था बल्कि इसको कम लागत में उपलब्ध हो सकने वाला भी बनाना था। इस कृत्रिम अंग की कीमत लगभग तीस हज़ार रूपए है। इस घुटने के प्रयोग से विकलांग व्यक्ति, जिनका पाँव घुटने से ऊपर कटा है, सामान्य रूप से चल-फिर सकेंगे।

संकलन : दिनेश पंकज, संजीव वर्मा, नीलेश कुमार,
संजीव कुमार, अरिंदम चैटर्जी एवं आमोद कुमार
सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

भूकम्पपूर्व-चेतावनी प्रणाली की संकल्पना

परिचय

भारत में भूकम्प, उत्तर में यूरेशियन प्लेट के साथ भारतीय प्लेट की टक्कर से उत्पन्न होते हैं। हर साल भारतीय प्लेट लगभग 5 सेंटीमीटर उत्तर की ओर यूरेशियन प्लेट के नीचे सिमट रही है और हिमालय व अन्य पर्वत श्रृंखलाओं का विन्यास हो रहा है। भौगोलिक दृष्टि से हिमालय दुनिया में सबसे अस्थिर भू-वैज्ञानिक संरचनाओं में से एक है। भारत और उसके पड़ोसी देशों पर भूकम्प का अत्यधिक खतरा है क्योंकि ये भूकम्प की दृष्टि से सबसे अधिक संवेदनशील बेल्ट पर मौजूद हैं। पिछले दशक के दौरान भूकम्प की निरंतर घट रही घटनाओं ने भारतीय प्रायद्वीप की भूकम्पीय संवेदनशीलता पर एक बड़ा सवालिया निशान लगा दिया है। भूकम्प के कारण हाने वाले और जानमाल के विनाश का वर्णन कल्पना से परे है। भूकम्प का माप इस बात पर निर्भर करता है कि प्लेटें कितनी सरकी हैं और कितना क्षेत्र इसके संपर्क में शामिल है। भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तरी भाग में ज्यादातर भूकम्प इसी जटिल प्रक्रिया के परिणाम होते हैं। अतीत के अनुभव से यह बात प्रमाणित होती है कि हिमालय के क्षेत्र में निकट भविष्य में बड़े भूकम्प आ सकते हैं, जो लोगों के जीवन के लिए घातक हो सकता है। हिमालय के क्षेत्र में आने वाले बड़े भूकम्प संपत्ति और जीवन के संदर्भ में अकल्पनीय तबाही पैदा करने में सक्षम हैं, इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता। यह बात भी सत्य है कि आज भी भूकम्प की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती है। हालांकि इस दिशा मे निरंतर वैज्ञानिक प्रयास किए जा रहे हैं लेकिन आज भी यह हमारी समझ से परे है और निकट भविष्य में भी इसकी भविष्यवाणी करना संभव नहीं लग रहा है। यह कोई नहीं जानता कि भूकम्प कब और कहाँ आएगा परन्तु प्रश्न यह उठता है कि इस दिशा में हम क्या प्रयास कर सकते हैं?

आधुनिक तकनीक पर आधारित कुछ वैज्ञानिक प्रयासों से जनमाल की हानि को कम से कम किए जाने की आवश्यकता है। इसके लिए एक ऐसे सेंसर नेटवर्क की परिकल्पना की अवश्यकता है जो कि धरती में कंपन प्रारम्भ होने से पूर्व महत्त्वपूर्ण प्रतिष्ठानों को समय पूर्व चेतावनी भेज सके। अगर हम महत्त्वपूर्ण और सामरिक उपयोगिताओं को अस्थायी रूप से बंद कर दें तो हानि को काफी हद तक बचाया अथवा टाला जा सकता है, जैसे कि - 'हवाई उड़ानों की लैंडिंग और उड़ान', 'विद्युत ट्रेनों की गति', 'परमाणु बिजली स्टेशनों और हाइड्रो बांधों और गैस की आपूर्ति आदि।

बड़े भूकम्प के परिणामस्वरूप जनमाल की व्यापक क्षति को कम करने के लिए 'भूकम्प चेतावनी प्रणाली (Seismic Alert System) की संरचना आज की तत्काल आवश्यकता है। अंर्तराष्ट्रीय बाज़ार में

उपलब्ध आधुनिक वैज्ञानिक घटकों जैसे कि -आधुनिक भूकम्पीय सेंसर (Seismometer और Accelerometers), High Resolution Digitizers, उपग्रह आधारित संचार सुविधाओं (सूचना प्रौद्योगिकी) आदि की सहायता से इस संरचना का निर्माण किया जा सकता है। इस संरचना का परिचालन उद्देश्य है कि चेतावनी संकेत को उत्पन्न कर महत्त्वपूर्ण प्रतिष्ठानों पर समय पूर्व चेतावनी भेज सकें जिससे कि बड़े भूकम्प से होने वाले नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सके। भूकम्प चेतावनी प्रणाली का योजनाबद्ध दृश्य रेखा-चित्र एक में दर्शाया गया है :

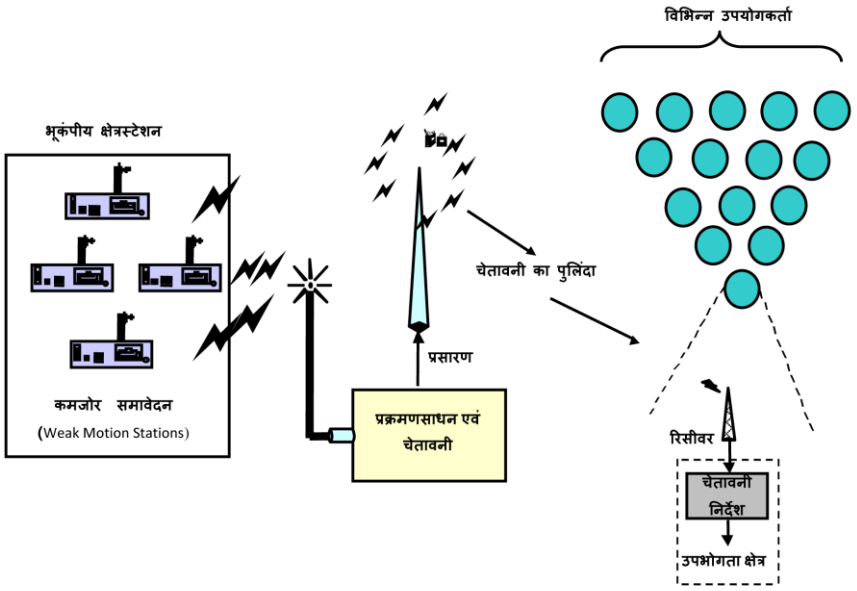

रेखाचित्र-1 : भूकम्प पूर्व-चेतावनी का योजनाबद्ध दृश्य

आधारभूत सिद्धांत

भूकम्प के दौरान P और S तरंगों (प्राथमिक और माध्यमिक) का धरती के भीतर फैलाव होता है और ये पहले महसूस होती हैं। P या प्राथमिक तरंग सबसे तेज़ी से रिकॉर्डिंग स्थल तक पहुँचती है, इससे जानमाल को क्षति नहीं पहुँचती, क्योंकि यह तरंग धुरी (axis) के समानांतर चलती है। प्राथमिक तरंगों के बाद ही अन्य तरंगें जैसे कि S तरंग, रैले तरंग, लव तरंग इत्यादि पहुँचती हैं, जो कि जानमाल को बहुत नुकसान पहुँचाती हैं, क्योंकि यह तरंग धुरी (axis) से 90° पर चलती है। P तरंगें 6 किमी/सेकिण्ड की रफ्तार से चलती हैं और S तरंगें 4 किमी/सेकिण्ड की रफ्तार से चलती

हैं। P और S तरंगों को चित्र संख्या – 2 में दर्शाया गया है। P तरंगें क्योंकि कोई हानि नही पहुँचाती इसीलिए इन्हें सूचक तरंग भी कहा जाता है। P तरंग के कुछ सेकिण्ड बाद के सूचक की वर्णक्रमीय (Spectral) विशेषताओं के प्रयोग से भूकम्प की विशालता का अनुमान लगाया जा सकता है। भूकम्प की एपिसेंट्रल दूरी और विशालता के आधार पर उपभाक्ताओं को कुछ सेकिण्ड की अग्रिम चेतावनी दी जा सकती है क्योंकि तरंगों की गति भिन्न-भिन्न होने के कारण चेतावनी की अवधि, किसी क्षेत्र से उसकी एपिसेंट्रल दूरी के आधार पर निकाली जा सकती है।

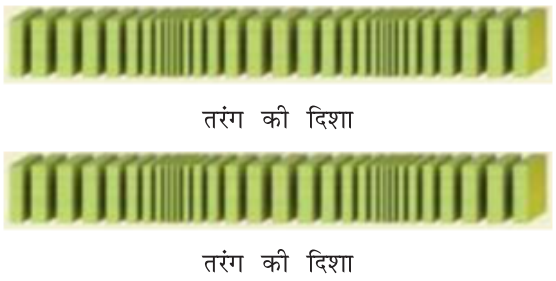

रेखा-चित्र -2 P और P तरंग

धरती की कंपन शुरू होने से पहले चेतावनी की अवधि कुछ सेकंड से दसियों सेकंड तक की हो सकती है। चेतावनी प्रणाली को साकार करने के लिए सेंसर नेटवर्क को भूकम्प की आशंका वाले क्षेत्र में स्थापित करना होता है, जो सेंसर भूकम्प के एपिसेंटर के निकटतम होता है, वह डाटा को प्रकाश की गति से सेंसर डेटा प्रसंस्करण (सेंट्रल रिकॉर्डिंग स्टेशन) भेज देता है, जहाँ पर S तरंगों के पहुंचने से पहले ही डाटा की प्रोसेसिंग के बाद एक व्यापक अलार्म प्रसारित होता है, जोकि महत्त्वपूर्ण प्रतिष्ठापनों एवं जनता को सचेत करने के लिए भूकम्प की पूर्व चेतावनी देता है।

संक्षिप्त कार्यप्रणाली

उन्नत उपकरणों को भूकम्प की आशंका वाले क्षेत्र में स्थापित किया जाता है ताकि उस क्षेत्र में उत्पन्न होने वाले किसी भी बड़े भूकम्प की घटना से बचा जा सके। उन्नत उपकरण जैसे कि – भूकम्पीय संवेदी, भूकम्प-सूचक रिकॉर्डर, डाटा हस्तांतरण के लिए वीसैट (VSAT) लिंक इत्यादि भूकम्पीय घटना की निगरानी और पता लगाने के लिए स्थापित किए जाते हैं। भूकम्पीय घटना का पता लगाने पर भूकम्प-सूचक रिकॉर्डर भूकम्पीय संकेतों की रिकॉर्डिंग शुरू करता है और समानांतर

एक 'एक्स' नामित फाइल उत्पन्न करता है, जिसमें घटना से पूर्व का डेटा, समय-निर्धारण के लिए जीपीएस डेटा और भूकम्पीय घटना के बाद के कुछ सेकंड का डाटा होता है। इस 'एक्स' फाइल को स्वचालित रूप से वीसैट लिंक के माध्यम से (ftp) प्रोटोकॉल का प्रयोग कर सेंट्रल रिकॉर्डिंग स्टेशन (CRS) मे भेज दिया जाता है। यदि सेंट्रल रिकॉर्डिंग स्टेशन में पूर्व निर्धारित समय के भीतर कम से कम तीन नामित 'एक्स' फाइलें प्राप्त होती हैं तो इसे भूकम्पीय घटना घोषित किया जाता है अन्यथा इसे अनचाहा संकेत मान कर नज़रअंदाज कर दिया जाता है। भूकम्पीय घटना घोषित होने पर एक प्रज्ञ एल्गोरिथ्म निष्पादित होता है, जो कि प्राप्त भूकम्पीय घटना के बाद के कुछ सेकंड के डाटा से P तरंग के आने के समय की गणना करता है और अन्य आवश्यक भूकम्पीय मापदंडों जैसे कि - भूकम्प की विशालता, उपरिकेंद्र (Epicenter) इत्यादि का भी आकलन करता है। पूर्व चेतावनी प्रणाली का मुख्य उद्देश्य क्षेत्र में भूकम्प के झटके आने से पहले ही प्रमुख प्रतिष्ठानों को अलार्म देना है। डाटा की सुरक्षा का आश्वासन भी इस परियोजना का अहम मुद्दा है, इसलिए कुशल एन्क्रिप्शन और डिक्रिप्शन एल्गोरिदम का प्रयोग कर संचार चैनलों को सुरक्षित किया जाता है। निम्न सूत्र की सहायता से भूकम्प की पूर्व चेतावनी के समय का आकलन किया जा सकता है:

$T = (\text{दूरी}/4) - To$

जहाँ To ओवरहेड समय है, जो कि $= TP + TF$

TP = प्रसंस्करण का समय और TF = प्रथम तरंगों के आगमन का समय

भूकम्प पूर्व-चेतावनी निकाय की उपयोगिता

अब प्रश्न उठता है कि जब भूकम्प पूर्व-चेतावनी निकाय से सिर्फ कुछ सेकंड से लेकर एक मिनट तक के समय में मिल सकती है वो भी अनिश्चितता के साथ, तो फिर इसकी उपयोगिता क्या है और हम इतने समय में क्या कर सकते हैं। विभिन शोध पत्रों से यह पता लगता है कि भूकम्प पूर्व-चेतावनी की बहुत सी उपयोगिताएं हैं। इसका प्रयोग जापान ने रेलवे के क्षेत्र में किया है, जैसे ही भूकम्प आता है वे उसकी तीव्रता के आधार पर ट्रेन की गति को नियंत्रित करते हैं। इसका उदाहरण हाल ही में 7 दिसम्बर, 2012 को आए भूकम्प के दौरान भी देखने को मिला कि कैसे ट्रेन में भूकम्प की पूर्व-चेतावनी देकर जानमाल की क्षति को कम किया गया। परमाणु ऊर्जा संयंत्र में भी भूकम्प पूर्व-चेतावनी निकाय बहुत उपयोगी है। भूकम्प के दौरान पूर्व-चेतावनी का प्रयोग कर परमाणु ऊर्जा संयंत्र को बंद किया जा सकता है। परमाणु ऊर्जा संयंत्र को भूकम्प के दौरान अगर बंद न किया जाए तो इसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं इसीलिए इसकी सामरिक उपयोगिताएं भी है। इसका उदाहरण

भी हाल ही में 7 दिसम्बर, 2012 को जापान में आए भूकम्प के दौरान देखने को मिला। बाद में संयंत्र को बंद करने मे बहुत संघर्ष करना पड़ा। इगनलिना परमाणु ऊर्जा संयंत्र, लिथुयाना ने भूकम्प पूर्व-चेतावनी निकाय को पहली बार कार्यान्वित किया था। भूकम्प पूर्व-चेतावनी का प्रयोग करके जानमाल का नुकसान कम किया जा सकता है, जैसे कि – वायुयान की लैंडिंग और उड़ान', हाइड्रो बांधों और गैस की आपूर्ति आदि को अस्थायी रूप से बंद करना', कुछ आपातकालीन सेवाओं - दमकल विभाग को सूचित करना, विकट शल्यचिकित्सा के दौरान बिजली को स्वचालित करना इत्यादि मुख्य हैं।

संकलन : सतीश कुमार, रिपुल घोष, अपर्णा अकुला,
आशीष गौरव, एच. के. सरदाना, रेणु विग एवं पवन कपूर
सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

प्राकृतिक आपदाएँ एवं हिमस्खलन

गर्मियों की छुट्टियों होते ही सैलानी भारत में अनेक स्थानों का भ्रमण करने निकल पड़ते हैं। कुछ तो समुद्र के तटीय किनारों पर जाकर समुद्र की लहरों का आनन्द लेते हैं और कुछ ठीक इसके विपरीत पर्वतीय क्षेत्रों में पहुँच कर प्राकृतिक सुन्दरता को निहारते हैं। इन पर्वतीय क्षेत्रों में भी वे क्षेत्र सबसे अधिक लुभावने होते हैं जिन स्थानों पर बर्फ पड़ती है या फिर जमा हुई होती है। बर्फ तो शुरू-शुरू में रूई के फाहे की भाँति मुलायम होती है जिससे सैलानी अपनी कल्पना के अनुसार कोई भी आकृति बना लेते हैं। यही बर्फ (हिम) हिम शिखरों पर पड़ने के बाद कठोर हो जाती है और पहाड़ों के साथ अपना सम्पर्क बना कर ढलुआ स्थानों पर भी स्थिर हो जाती है। बर्फ देखने में जितनी आकर्षक होती है उतना ही वैज्ञानिकों के लिए एक चुनौती का कारण रहती है। इसका मुख्य कारण वातावरण में आए निरन्तर परिवर्तन से हिम-खण्ड का सम्पर्क पर्वतीय सतह से कम हो जाता है या फिर टूट जाता है। जिससे हिम-खण्ड का भाग ढलान होने के कारण नीचे की ओर फिसलने लगता है, जिसे हिम-स्खलन कहते हैं।

हिम-स्खलन का अध्ययन करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि बर्फ की संरचना का अध्ययन, सतह की मोटाई, आर्द्रता, घनत्व, तापमान तथा प्रतिदिन होने वाले हिमपात की गहराई जानना अत्यावश्यक होता है।

भारतवर्ष में मात्र एक संस्था **सासे** है, जो डी आर डी ओ के अधीन इस प्रकार के कार्य करती रहती है। इस कार्य को करने के लिए सासे ने सी एस आई ओ का सहयोग लिया तथा सी एस आई ओ नें अपने अनुभव तथा योग्य वैज्ञानिकों के अथक परिश्रम से विभिन्न उपकरणों का विकास किया जैसे:-

- हिमपात गहराई मापन यंत्र
- हिम की भीतरी सतह का तापमान मापन यंत्र
- हिम की आर्द्रता मापन यंत्र
- इन्फ्रारेड ताप मापन यंत्र : ऊपरी सतह का तापमान मापन
- बहुआयामी मापन यंत्र

हिमपात गहराई मापन यंत्र

हिमपात गहराई मापन यंत्र मुख्य रूप से बिना सम्पर्क किए ही हिमपात की गहराई मापने में सक्षम है। इस यंत्र को सर्वप्रथम एक खम्भे पर लगाते हैं। जहाँ पर हिमपात का मापन करना है, उस स्थान पर इसे हिमपात की सतह के उर्ध्वाधर रखते हैं जिससे हिमपात की ऊँचाई ज्ञात की जा सके। इस यंत्र से अल्ट्रासोनिक तरंगें निकलती हैं जो हिमपात की सतह से टकराने के बाद पुन:परिवर्तित होकर यंत्र की ओर लौट जाती हैं। इस कार्य में लगे समय से यंत्र तथा हिमपात की सतह के बीच की दूरी निकाल लेते हैं। ठीक इसी प्रकार जब हिमपात होता है तो यह यंत्र लगातार हिमपात की सतह की दूरी ज्ञात कर लेता है जिससे हिमस्खलन का पूर्वानुमान करने में सहायता मिलती है।

हिम की विभिन्न आन्तरिक सतहों का ताप मापन यंत्र

हिम की आन्तरिक सतह का ताप मापन यंत्र उन स्थानों पर प्रयुक्त किया जाता है जहाँ पर हिम काफी लम्बे समय तक पड़ती है। इस यंत्र की सहायता से हिम की आन्तरिक सतह का ताप ज्ञात करना होता है। इस कार्य के लिए इसमें 28 तापमापी संवेदी लगे होते हैं, जिनसे अलग-अलग ऊँचाई पर हिम का ताप माप सकते हैं। इन 28 तापमापी संवेदियों में 7 तापमापी संवेदी हिम के भीतर या फिर चट्टानों के अन्दर गड्ढा खोद कर किसी खम्भे के सहारे खड़ा कर देते हैं जिससे हिम के अन्दर की सतह का ताप मापा जा सकता है और बाकी के 20 तापमापी संवेदी इसके ऊपर लगे होते हैं जो गिरने वाली हिम का तापमान मापने में सहायक होते हैं। शेष एक तापमापी संवेदी को वहाँ के वातावरण का ताप मापने के लिए पोल के शिखर की ऊँचाई पर लगाते हैं। इस यंत्र की कुल ऊँचाई 4 मीटर की होती है, यंत्र पर ताप संवेदी को त्रिवेश्मीय विन्यास में लगाने से हिम की तीनों दिशाओं में ताप मापने में सहायता मिलती है। वैज्ञानिक इस ताप के आधार पर ही हिम-स्खलन के पूर्वानुमान की जानकारी प्राप्त करने में सफल हो पाते हैं।

मल्टी पैरामीटर प्रोब

जिस प्रकार हिम की संरचना के अध्ययन में हिम की सतह की मोटाई तथा हिम की आन्तरिक सतह के तापमान का मापन करना जरूरी होता है, ठीक उसी प्रकार हिम-स्खलन के पूर्वानुमान के लिए हिम के घनत्व का मापन अनिवार्य है। इस कार्य को करने के लिए मल्टी पैरामीटर प्रोब की आवश्यकता होती है, जिसके लिए सी एस आई ओ ने इस प्रकार के यंत्र का विकास किया है जिसकी सहायता से हिम के घनत्व का मापन किया जाता है। इस यंत्र को हिम की सतह पर स्थापित करके इसके सिग्नल कंडिशनर के द्वारा एक मोटर को प्रेरित किया जाता है। मोटर के चलने से एक छड़ धीरे-धीरे हिम में प्रवेश करने लगती है, इस छड़ के ऊपर 500 न्यूटन का दाब प्रेरित करते हैं जिससे 500 किलोग्राम का दाब उत्पन्न कर सकते हैं तथा 1700 मिलीमीटर गहराई तक हिम घनत्व ज्ञात कर सकते हैं। इस यंत्र में 4 एमबी तक का डाटा स्टोर करने की क्षमता होती है। इस डाटा की सहायता से हम हिम-स्खलन के पूर्वानुमान की जानकारी लेने में सफल हो पाते हैं ।

हिम आर्द्रता मापन यंत्र

हिम-स्खलन की विस्तृत जानकारी के लिए हिम आर्द्रता अति आवश्क है क्योंकि हिम में उपस्थित आर्द्रता के कारण ही हिम जब जल में परिवर्तित होने लगती है तो हिम स्खलन की संभावना अधिक हो जाती है। इसलिए हिम की आर्द्रता का मापन करना अति आवश्यक है इस मापन के लिए माइक्रो वेव तंरगों को स्टील की छड़ के माध्यम से प्रेरित कर हिम में प्रवेश कराते हैं। जब ये माइक्रो वेव तरंगें हिम में प्रवेश करती हैं तो इनकी आवृत्ति हिम में अनुनादित होने के बाद पुनः स्टील छड़ पर वापस आती है तो हिम के डाईइलैक्ट्रिक कॉन्स्टेंट से हिम में उपस्थित जल के कणों की संख्या ज्ञात हो जाती है। इस यंत्र से त्वरित मापन के लिए इसमें माइक्रो कंट्रोलर का प्रयोग किया गया है तथा परिणाम को उसी समय देखने के लिए इसमें एल सी डी की सहायता ली गई है। इसमें एकत्र डाटा को आर एस 232 सी की सहायता से गणना

के लिए कम्प्यूटर में भेज देते हैं। प्राप्त परिणामों की सहायता से हिम की आर्द्रता का मापन करने के बाद हिम स्खलन होने का उचित अनुमान लगाया जाता है। इतना ही नहीं इसकी सहायता से नदियों में जल स्तर को भी ज्ञात किया जाता है।

इन्फ्रारेड ताप मापन यंत्र (ऊपरी सतह का तापमान)

जो पर्वतीय क्षेत्र मनुष्य की पहुँच से दूर होते हैं, उन क्षेत्रों पर पड़ी हिम का तापमान ज्ञात करना कठिन होता है। इसे स्पर्श विधि से ज्ञात करना असम्भव है, इस चुनौती का समाधान सीएसआईओ के वैज्ञानिकों ने अपनी कुशलता से इन्फ्रा रेड तकनीक के प्रयोग से निकाला जो दूर से ही मानव की पहुँच से दूर स्थानों का ताप मापने में सक्षम है। इस यंत्र के द्वारा इन्फ्रा रेड तरंगों को उत्पन्न कर लक्ष्य की ओर भेजते हैं। ये तरंगें लक्ष्य से टकराने के बाद पुनः अपने संवेदी पर आ जाती हैं जिससे ऐसे स्थानों का ताप ज्ञात कर लेते हैं। इस यंत्र की एक विशेषता यह है कि मनुष्य इसे एक हाथ से उठाकर प्रयोग कर सकता है जिससे दूर के हिम शिखरों का ताप ज्ञात कर उनमें आए ताप परिर्वतन से होने वाली प्राकृतिक आपदाओं का अनुमान लगा सकता है ।

जन साधारण को प्राकृतिक आपदाओं से बचाने में सहायक इन सभी प्रकार के उपकरणों के विकास में सीएसआईओ से श्री ए डी कौल, श्री वाइ पी एस कलसी, श्री मनजीत सिंह, श्री स्वर्णजीत सिंह, श्री आर एस शौण्डा, सुश्री बंदना खुल्लर, श्री अजय सक्सेना आदि का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

संकलणः डा एस के मित्तल (चीफ वैज्ञानिक)

सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

वैमानिक प्रदर्श प्रणाली : हेड अप डिस्प्ले

स्वप्न देखना मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति है और उनके साकार होने की कल्पना हर इंसान खुली आँखों से करता है। कालांतर में विज्ञान एवं तकनीक सपनों को साकार करने का एक ज़रिया बन गए हैं। विज्ञान एवं तकनीक के माध्यम से हम जीवन को उन्नत बनाने के लिए अनुसंधान कर नए उपकरण एवं प्रक्रियाएं विकसित करते हैं। वैमानिकी व रक्षा के क्षेत्र भी इससे अछूते नहीं रहे हैं।

पौराणिक गाथाओं में वर्णित पुष्पक विमान की अवधारणा से लेकर आधुनिक वायुयान तक की गौरव गाथा हमारे मानस पटल पर अंकित है। समय के साथ विमानों की तकनीक काफी उन्नत होती गई और आज ऐसे अत्यधुनिक विमान तैयार हो चुके हैं जो कि आवाज से भी तेज़ गति से उड़ान भरते हुए सटीक आवागमन व युद्ध करने में सक्षम हैं। इस तरह के विमानों के सफल परिचालन हेतु नवीन तकनीक एवं उपकरण विकसित किए गए हैं जोकि पायलट को दक्षतापूर्ण सफल परिचालन में सहायता करते हैं। तकनीकी विकास के साथ इनमें सटीक दिशादर्शक व लक्ष्य भेदक यंत्रों की माँग निरंतर बढ़ रही है।

सैन्य उड्डयन, लड़ाई के दौरान संघर्ष एवं अग्रिम सेनाओं के लिए आवश्यक आयुध पहुँचाने हेतु विमानों के प्रयोग को कहते हैं तथा इसके लिए विभिन्न प्रकार के विमान उपलब्ध हैं जैसे लड़ाकू, बमवर्षक, परिवहन, प्रशिक्षक, मानव रहित आदि। लड़ाकू विमान मुख्यत: दुश्मन की सेना के विमानों से हवाई युद्ध, जिसे 'डॉग फाइट' कहते हैं, के लिए तैयार किया जाता है। तीव्र गति, छोटा आकार व गतिशील उन्नत नियंत्रण प्रणाली इसकी विशेषताएँ होती हैं। इन विमानों के कॉकपिट में विभिन्न प्रदर्शक यंत्र (जिन्हें लाइन रिप्लेसेबल यूनिट कहते हैं) होते हैं जैसे हेड-अप-डिस्प्ले (हड), बहु प्रकार्य डिस्प्ले, हेड-डाउन-डिस्प्ले, बहु प्रकार्य कुँजी पटल आदि। इनमें से 'हेड-अप-डिस्प्ले' प्रधान उपकरण है।

जंग के दौरान जब लड़ाकू विमान हमला करता है तो पायलट आवाज़ से भी तेज़ गति से, मित्र विमानों के पायलटों के समन्वय में उड़ान भरते हुए और दुश्मन के विमानों व गोला-बारूद को चकमा देते हुए न्यूनतम समय में अधिकतम नुकसान पहुँचाने हेतु कार्य करता है। उक्त परिस्थिति में पायलट को बाहरी परिदृश्य को देखना, विमान का नियंत्रण, आयुधों का प्रक्षेपण, साथी पायलटों के

साथ संवाद आदि जैसे विभिन्न कार्य करने होते हैं जिससे कि उसे पलक झपकने का भी समय नहीं मिलता। वह केवल बाहरी परिदृश्य पर नजर रखते हुए मित्र विमानों के साथ समन्वित प्रयास करता है। इन परिस्थितियों में हड ही वह उपकरण है जो पायलट की अत्यधिक सहायता करता है। वास्तव में यह उपकरण विमान की आँख है जो पायलट की तीसरी आँख की तरह कार्य करता है (चित्र संख्या 1)।

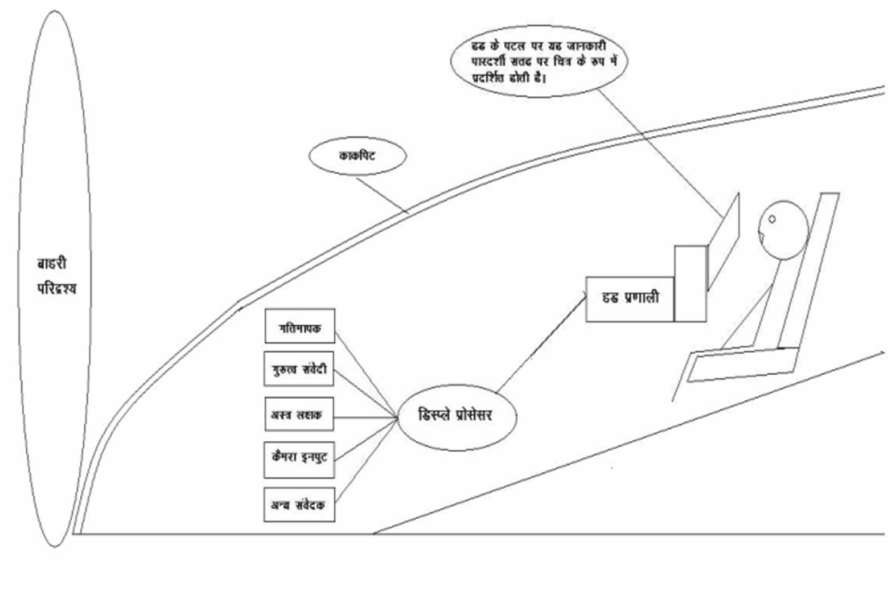

चित्र संख्या 1: हड की कार्यप्रणाली

हड एक ऐसा पारदर्शी डिस्प्ले है जो कि प्रयोगकर्ता को अपने मुख्य परिदृश्य पर दृष्टि रखते हुए अन्य उपयोगी जानकारी देखने की क्षमता प्रदान करता है। इस उपकरण के 'हेड-अप-डिस्प्ले' नाम का उद्‌भव पायलट को अनेक जानकारियाँ समानांतर देख पाने की क्षमता प्रदान करने के कारण हुआ है। हड की सहायता से पायलट उड़ान संबंधी मापीय तथा संवेदी जानकारी जैसे गति, गुरुत्वाकर्षण बल, कृत्रिम क्षितिज आदि अपने बाहरी परिदृश्य पर अध्यारोपित रूप में सिर सीधा रखते हुए देख लेता है तथा इसके लिए उसे अपना सिर उपकरण के पैनल की ओर नहीं झुकाना पड़ता (चित्र संख्या 2)। इससे न केवल उसे परिचालन में आसानी होती है अपितु उसकी कार्यक्षमता व विमान की मारक क्षमता में भी वृद्धि होती है।

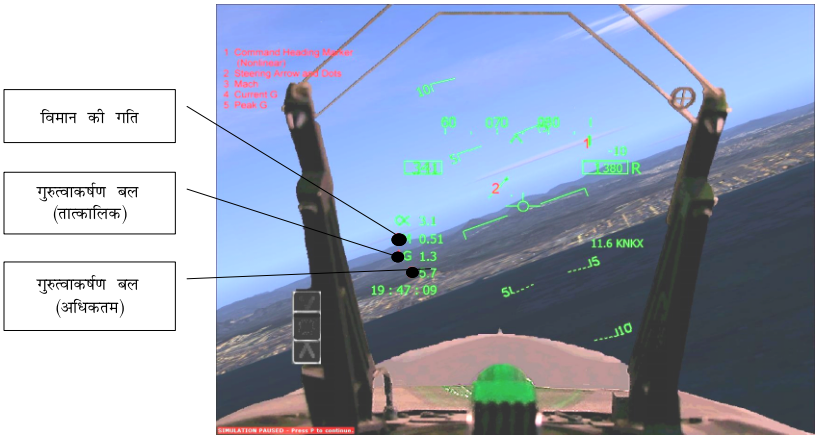

चित्र संख्या 2: एफ.ए.-18-सी विमान के हेड-अप-डिस्प्ले द्वारा बाह्य परिदृश्य के साथ मापीय व संवेदी जानकारी भी देखी जा सकती है

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान परावर्ती परिदृश्य प्रणाली का उपयोग लड़ाकू विमानों में किया गया था जो कि हिलते हुए लक्ष्य को भेदने में सहायता करता था। इसी प्रणाली का विस्तृत प्रादुर्भाव हड तकनीक के रूप में हुआ। बी.ए.ई. सिस्टम्स, इंग्लैड को प्रथम क्रियाशील हड के निर्माण का श्रेय दिया जाता है। फ्रांसीसी परीक्षण पायलट गिलबर्ट क्लोप्सटीन द्वारा आधुनिक हड का निर्माण किया गया व हड में दिखाई जाने वाली प्रतीकविधा (सिम्बोलॉजी) का मानकीकरण भी किया गया। मूलत: हड प्रणाली का विकास सैनिक उड्डयन हेतु हुआ था पर बाद में यह प्रणाली असैनिक उड्डयन व ऑटोमोबाइल क्षेत्र में भी प्रयुक्त की जाने लगी है।

हड प्रणाली के स्वदेशीकरण की आवश्यकता

स्वदेशी विमान के विकास हेतु भारत सरकार की महत्वाकांक्षी एल.सी.ए. परियोजना के प्रबंधन के लिए सरकार द्वारा वैमानिकी विकास एजेंसी (ए.डी.ए.) नामक एक नोडल संस्था की बैंगलोर में स्थापना की गई जो कि 100 से अधिक राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, उद्योगों व शिक्षण संस्थानों का समूह है। स्वदेशी तकनीक को प्रोत्साहित करने के अपने मूल उद्देश्य की दिशा में कार्य करते हुए ए.डी.ए. ने यह सुनिश्चित किया कि एल.सी.ए. के 35 प्रमुख वैमानिक अवयवों में से अधिकतर स्वदेशी हों। 'हेड-अप-डिस्प्ले' प्रणाली विमान की एक प्रमुख व महत्त्वपूर्ण प्रणाली है तथा इसका स्वदेशीकरण कार्य भी एल.सी.ए. कार्यक्रम की मूल भावना के अनुरूप ही किया गया है।

केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, चण्डीगढ़ का हड विकास के क्षेत्र में पदार्पण

ए.डी.ए. द्वारा वैमानिक विकास स्थापना(ए.डी.ई.), बैंगलोर का चुनाव हल्के लड़ाकू विमान की डिस्प्ले प्रणालियों के विकास हेतु नोडल एजेंसी के रूप में किया गया था। ए.डी.ई. ने हड तथा संबद्ध परीक्षण उपकरणों के विकास के लिए वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के अधीन कार्यरत केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (के.वै.उ.सं.), चण्डीगढ़ से संपर्क किया। इसका मुख्य कारण के.वै.उ.सं. की ऑप्टिक्स आधारित इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के विकास में दक्षता तथा लम्बा सफल कार्यानुभव था। क्रमिक विचार विमर्श के बाद के.वै.उ.सं. ने औपचारिक रूप से इस महत्त्वाकांक्षी परियोजना के प्रथम चरण का कार्य प्रारंभ किया।

एल.सी.ए. के कॉकपिट (चित्र संख्या 3) में दो बहु प्रकार्य डिस्प्ले होते हैं जिनमें समान अथवा अलग-अलग जानकारी को प्रदर्शित कर सकते हैं। हेड अप डिस्प्ले चालक कक्ष के मध्य में मुख्य स्थान पर स्थापित होता है तथा यह पायलट को उड़ान संबंधी आवश्यक जानकारी, दिशादर्शन व लक्ष्य भेदन संकेत आदि उसके बाहरी परिदृश्य पर आरोपित करके दिखाता है।

चित्र संख्या 3: हल्के लड़ाकू विमान का कॉकपिट

हड उड़ान संबंधी जानकारी को संधानित रूप (Collimated) में इस प्रकार से प्रस्तुत करता है कि पायलट को अपनी दृष्टि रेखा व परिदृश्य अनुकूलन में कोई परिवर्तन नहीं करना पड़ता। इससे चालक का कार्यभार कम हो जाता है और विमान की मारक क्षमता बढ़ती है। हड बुनियादी तथा आवश्यक जानकारी जैसे ऊँचाई, हवाई गति, आक्रमण कोण, कृत्रिम क्षितिज, दिशादर्शन, गुरुत्वाकर्षण बल, लक्ष्य भेदन, राडार तथा अग्रगामी इंफ्रारेड कैमरे की तस्वीरों आदि को प्रदर्शित करता है (चित्र संख्या

4)। विमान के परिचालन में अत्यधिक महत्त्व के कारण हड इकाई की विश्वसनीयता उत्कृष्ट होनी चाहिए।

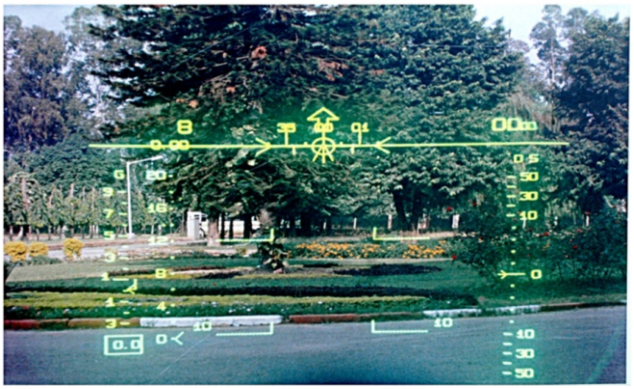

चित्र संख्या 4: हड द्वारा संधानित जानकारी का प्रदर्शन

के.वै.उ.सं., चण्डीगढ़ ने सामरिक वैमानिकी के क्षेत्र में लंबे समय से कार्यरत रहते हुए लड़ाकू तथा प्रशिक्षण विमानों के लिए हड तैयार किए हैं तथा भविष्य में नागरिक विमानन व अन्य क्षेत्रों में भी कार्य करने के लिए प्रयासरत है। 'तेजस' के लिए विकसित स्वदेषी हड कड़े मानक परीक्षणों के पश्चात् विमान की लगभग 1500 परीक्षण उड़ानों का हिस्सा रहा है तथा उड़ान के दौरान कभी भी असफल नहीं हुआ है।

हड में मुख्य रूप से एक चालक डिस्प्ले एकक, कैमरा व बहु प्रकार्य अप फ्रंट नियंत्रक पटल होता है। संस्थान द्वारा विकसित हड में संधानन (Collimation) के लिए अपवर्तक ऑप्टिक्स (Convergent Optics) व किरण-पुँज संयोजन हेतु सपाट बहुपरतीय थिन फिल्म ऑप्टिकल घटक का प्रयोग किया गया है। किरण पुँज संयोजक (beam combiner) की बैंडविड्थ लगभग 20 नैनोमीटर होती है। ऑप्टिकल प्रणाली द्वारा सीआरटी के पटल पर प्रदर्शित प्रतिबिंब को संधानित रूप में चालक के बाहरी परिदृश्य पर आरोपित करके दिखाया जाता है। किरण पुँज संयोजक की परिकल्पना इस प्रकार से की गई है कि वह सीआरटी की फास्फोरस परत द्वारा उत्सर्जित हरी तरंगदैर्घ्य के लिए उच्च प्रतिवर्तक व प्रकट प्रकाश हेतु उच्च पारगामी होता है। लम्बन त्रुटि व दृष्टि रेखा विरूपण को दूर करने के लिए किरण पुँज संयोजक में दो समतल समांतर पृष्ठ होते हैं। सीआरटी में प्रयुक्त फास्फर दूसरी व तीसरी पीढ़ी के रात्रि दृष्टि चश्मे के लिए उपयुक्त है। यह

डिस्प्ले प्रणाली एकवर्णी सीआरटी डिस्प्ले है जिसमें इलैक्ट्रॉनिक्स द्वारा जनित जानकारी का प्रवाही अथवा रेखापुँजीय प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है। हड उपकरण को एयरफ्रेम पर दृढ़ारोहित (hard mounted) करके विमान की डेटम रेखा के साथ संरेखित किया जाता है। बाएं व दाएं बहु प्रकार्य डिस्प्ले के साथ हड चालककक्ष में वैमानिक डिस्प्ले समूह का निर्माण करता है।

हिन्दुस्तान जेट ट्रेनर प्रशिक्षु विमान हेतु हेड अप डिस्प्ले का डिज़ाइन व विकास

एच.जे.टी.-36 विमान हेतु हेड-अप-डिस्प्ले का डिज़ाइन, कॉकपिट में उपलब्ध सीमित स्थान, हल्के वज़न व पंखारहित ताप प्रबंधन जैसी आवश्यकताओं के कारण एक चुनौतीपूर्ण कार्य था। संस्थान के हड डिज़ाइन समूह ने इस कार्य को बखूबी पूर्ण किया व हड का वृहद् दृष्टि क्षेत्र वाला एकक तैयार किया है। इस तकनीकी विकास की प्रमुख उपलब्धियाँ सुगठित आकार, हल्का वजन, पंखरहित व शोर रहित ताप प्रबंधन, न्यूनतम ऊर्जा खपत व इलैक्ट्रॉनिक स्टेंड-बाय दृष्टि का प्रावधान है। इलैक्ट्रॉनिक स्टेंड-बाय दृष्टि पायलट की उन परिस्थितियों में सहायता करती है जब विमान का मुख्य कम्प्यूटर किन्हीं तकनीकी कारणों से संवेदी व मापीय जानकारी देने में असफल हो जाता है। इसके अलावा अन्य विषेशताएँ जैसे बहुप्रकार्य डाटा एँट्री पैनल तथा स्वचलित ब्राइटनेस नियंत्रण प्रणाली भी पायलट की बहुत सहायता करती है।

चित्र संख्या 5: हिन्दुस्तान जेट ट्रेनर प्रशिक्षु विमान के कॉकपिट में स्थापित हड

अनुसंधान कार्यों की मौलिकता

सी.एस.आई.ओ. हड में निम्नलिखित अनुपम विशेषताएँ हैं:

- व्यवाहारिक रूप से न के बराबर सूर्य की चौंध
- ध्वनि रहित परिचालन
- संवहन व विकिरण के माध्यम से शीतलन
- इलेक्ट्रॉनिक आपातोपयोगी प्रतीकविधा
- सुसम्बद्ध व छोटी प्रणाली की परिकल्पना
- अत्यधिक दीप्त प्रतीकविधा
- न्यूनतम ऊर्जा खपत
- आन्तरिक मॉनिटर के माध्यम से प्रणाली की उपयुक्तता का निरन्तर परीक्षण
- वृहद् दृष्टि क्षेत्र
- अभिनव ऑप्टिकल परिकल्पना

प्रतियोगी तकनीकों की तुलना में श्रेष्ठता

- 25 डिग्री का वृहद् कुल दृष्टि क्षेत्र व 3300 फुट लेम्बर्ट से अधिक दीप्त प्रतीकविधा
- तापीय प्रबंधन हेतु पंखे के स्थान पर संवहन व विकिरण का प्रयोग किया गया है जिससे हड की ऊर्जा खपत व परिचालन ध्वनि कम होती है।
- सभी प्रदर्शन विनिर्देश अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप हैं। सी.एस.आई.ओ. हड का फोटोमीट्रिक प्रदर्शन अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगियों के मुकाबले बेहतर है।
- हड सभी सैनिक मानकों को पूरा करता है।
- उत्पादन व अनुरक्षण लागत अन्य अंतर्राष्ट्रीय प्रतियोगियों की अपेक्षा काफी कम है।

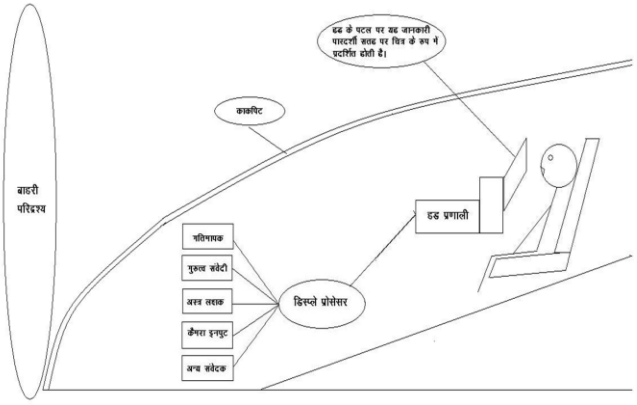

संकलणः संदीप सिंघई, विपन कुमार, सुरिन्दर सैनी, विनोद करार

सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

फोटोनिक्स तथा फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर

सारांश

फोटोनिक्स विज्ञान आधुनिक युग में एक वृहद क्षेत्र के रूप में उभरा है जिसमें विद्युत चुम्बकीय विकिरण (विद्युत चुम्बकीय स्पैक्ट्रम) की विभिन्न तरंगों का प्रयोग संचार, संवेदक, लेज़र, क्वांटम प्रकाशिकी, प्रकाशकीय यांत्रिकी, विद्युतीय प्रकाशिकी तथा प्रकाशकीय व क्वांटम इलैक्ट्रॉनिक्स आदि के क्षेत्रों में किया जा रहा है। फोटोनिक्स विज्ञान के अन्तर्गत फाइबर ऑप्टिक संवेदक एक महत्त्वपूर्ण नवीन विषय है जो सिविल, यांत्रिकी व वैमानिकी संरचनाओं की स्वास्थ्य मॉनिटरिंग के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो रहा है। यह वैज्ञानिक लेख फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग संवेदक (सेंसर) की लेखन तकनीक, उनके प्रयोग तथा अनुप्रयोग पर प्रकाश डालता है।

परिचय

विद्युत चुम्बकीय विकिरण कई प्रकार के होते हैं जिनमें रेडियो तरंग, माइक्रो तरंग, टेरा हट्र्ज तरंग, इन्फ्रा रेड प्रकाश, ऑप्टिकल (दृष्टिगत प्रकाश), पराबैंगनी किरण, एक्स किरण एवं गामा किरण मुख्य हैं। विद्युत चुम्बकीय विकिरणें प्रकाशकीय प्रकृति की होती हैं जो विद्युत चुम्बकीय तरंगों के साथ अन्तर्धारित होती हुई चलती हैं। अलबर्ट आइन्सटीन के अनुसार विद्युत चुम्बकीय विकिरणों में तरंग-ऊर्जा तरंग की आवृत्ति तथा तरंगदैर्ध्य दोनों ही से सम्बन्धित है।

ऊपर उल्लिखित विद्युत चुम्बकीय विकिरणें तरंग के रूप में होती हैं जो फोटोन कहलाते हैं । परिभाषा के अनुसार 'फोटोन' वह सूक्ष्म कण है जो विद्युत चुम्बकीय विकिरण या प्रकाश की मात्रा को दर्शाता है तथा ऊर्जा की एक विशिष्ट इकाई के रूप में कार्य करते हुए प्रकाश-वेग के साथ गमन करता है। 'फोटोन' शब्द निर्धारित करने का श्रेय गिलबर्ट लेविस को जाता है, जिसका प्रयोग सर्वप्रथम न्यूटन के ऑप्टिक्स विज्ञान में किया गया था। विज्ञान का ऐसा क्षेत्र जिसमें समस्त विद्युत चुम्बकीय विकिरणों (फोटोन) का उपयोग करते हुए संचार, संवेदक, लेज़र, क्वांटम प्रकाशिकी, प्रकाशकीय यांत्रिकी, विद्युतीय प्रकाशिकी तथा प्रकाशकीय व क्वांटम इलैक्ट्रॉनिक्स उपकरणों से संबंधित प्रायोगिक अध्ययनों तथा अनुप्रयोगों के कार्य निष्पादित होते हैं, उसे फोटोनिक्स विज्ञान कहते हैं। सन् 1960 में ''फोटोनिक्स'' शब्द चर्चा में आया, जब प्रकाश का उपयोग इलैक्ट्रॉनिक्स के क्षेत्र जैसे दूरसंचार तथा सूचना प्रक्रिया (Information processing) में किया गया। सन् 1960 में ही

लेज़र के आविष्कार के साथ फोटोनिक्स एक क्षेत्र के रूप में प्रारंभ हुआ। सन् 1970 में लेज़र डायोड, सूचना-संचारण के लिए प्रकाशकीय फाइबर तथा बाद में इरबियम डॉप्ड फाइबर एम्प्लिफायर का विकास हुआ जिससे बीसवीं सदी के अंत में दूरसंचार के क्षेत्र में एक क्रांति की शुरूआत हुई। सन् 1980 से दूरसंचार के लिए फाइबर ऑप्टिक डाटा को अपनाया गया तथा फोटोनिक्स टैक्नोलॉजी लेटर्स का प्रकाशन प्रारंभ हुआ।

फोटोनिक्स विज्ञान में उत्सर्जन (Emission), संचारण (Transmission), मोडुलन (Modulation), सिगनल-प्रोसैसिंग, प्रवर्धन (Amplification), प्रकाश की संवेदन तथा खोज (Detection) एवं स्विचीकरण (Switching) हेतु शोध व अध्ययन कार्य शामिल हुआ। फोटोनिक्स विज्ञान के विकास में प्रकाश स्रोतों पर अनुसंधान के लिए सिलिकॉन और जर्मेनियम अर्धचालक (Semiconductor) के रूप में महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ है, फलतः सिलिका फाइबर और प्लास्टिक फाइबर विद्युत चुम्बकीय विकिरण (प्रकाश या फोटोन) की तरंग पथदर्शन करने में तरंग पथदर्शी (Wave Guide) के रूप में प्रयोग किया जाने लगा। निरंतर शोध परिणाम से ऑप्टिकल फाइबर दूरसंचार एवं दूरदर्शन के लिए उपयोग किया जाने लगा। ऑप्टिकल फाइबर में संचारित विद्युत चुम्बकीय तरंग वृहद् बैण्डविड्थ के कारण असीमित सिगनलों को बिना रुकावट के एक साथ संचारित करने की क्षमता रखता है।

फोटोनिक्स में "फाइबर ऑप्टिक" विज्ञान की एक अलग पहचान बनी है। फाइबर ऑप्टिक विज्ञान में संचार-व्यवस्था के अलावा सेंसर पर शोधकार्य वृहद रूप से हो रहा है। परिणामस्वरूप यह देखा गया है कि जो पैरामीटर संचार सुविधा में रुकावट पैदा करता है, वही पैरामीटर सेंसर के लिए उपयुक्त पाया गया है। फाइबर में प्रकाश-तरंग का अवशोषण, विवर्तन, परावर्तन, फाइबर में सूक्ष्म-नमन (Microbending) फाइबर में प्रकाश के 'मोड' परिवर्तन ऐसे पैरामीटर हैं जो फाइबर के अन्दर प्रकाश-संचारण में व्यवधान उत्पन्न करते हैं; परन्तु संवेदन-कार्य में ये अत्यधिक उपयुक्त है।

क्या है संवेदक?

इसे जानने के लिए पहले हम अपने शरीर की संरचना के बारे में सोचें। शरीर की त्वचा स्वयं एक सेंसर के समान कार्य करती है जो किसी भी वस्तु को छू कर अपनी प्रतिक्रिया मस्तिष्क को पहुंचा देती है। उसी तरह नाक किसी भी गंध को सूंघ कर, कान किसी भी आवाज़ को सुनकर, आँखे वस्तुओं के रंग-आकार, प्रकृति आदि को देखकर अपनी-अपनी संवेदन प्रतिक्रियाएं मस्तिष्क को

भेजते रहते हैं। जिस तरह शरीर की नर्व प्रणाली तथा उत्तकों के कारण हम दु:खों व खुशियों को व्यक्त करके बता देते हैं उसी तरह बाह्य रूप से या आन्तरिक रूप से स्थित सेंसर के कारण कोई भी संरचना अपनी स्वास्थ्य मॉनिटरिंग चेतावनी प्रणाली द्वारा स्वयं कर सकती है। ऐसी संरचना एवं प्रणाली जो अपनी स्वास्थ्य मॉनिटरिंग या संरक्षण स्वयं कर सकती है, उसे 'स्मार्ट-संरचना' कहते हैं। उदाहरणार्थ, वायुयान उड़ान की स्थिति में महत्तम वायुगतिकी शर्तों के अनुरूप अपने पंखों को स्वयं मोड़ सकेगा। किसी संयंत्र प्रणाली में लगी नलिका बहुमूल्य द्रव्य पदार्थ के रिसाव को स्वयं सूचित कर सकेगी।

सेंसर की आवश्यकता क्यों?

समाचारपत्रों और दूरदर्शन से हमें प्रतिदिन झकझोर देने वाली खबरें मिलती रहती हैं जिनके कुछ उदाहरण नीचे उल्लेखित किए जा रहे हैं:-

- फार्मासियुटिकल कम्पनी में ब्वायलर के फटने से आग लगना और कर्मियों का मारा जाना
- हैलिकॉप्टर, मिग या जेट वायुयानों में आग का लगना तथा दुर्घटनाग्रस्त हो जाना।
- बहुमंजिली इमारतों के ढह जाने से लोगों का मारा जाना।
- कभी न भूलने वाली विडम्बना - कल्पना चावला तथा उनके ग्रुप को ला रहे अन्तरिक्षयान का वायु घर्षण से बाहरी हिस्से की टाइल टूटने के कारण दुर्घटनाग्रस्त हो जाना।
- विनाशकारी भू-कम्प अथवा सुनामी से उत्पन्न आपदाओं की तत्काल दुरुस्त चेतावनी प्रणाली के अभाव में लोगों का मारा जाना।
- विद्युत ट्रांसफार्मर का उसमें आग लगने से क्षतिग्रस्त होना तथा सारे शहर का अंधकार में डूब जाना।
- मानव रहित रेलवे फाटक पर अक्सर दुर्घटनाएं होना।

ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जिन से जन-जीवन प्रभावित होता रहता है। हम सोचने के लिए विवश हो जाते हैं कि काश तत्काल कोई निदान होता!...

उपरोक्त सभी दुर्घटनाएं संरचनाओं में उत्पन्न तापमान, दाब एवं तनाव के बढ़ने के परिणामस्वरूप ही होती हैं। भूकंप तथा सुनामी जैसी प्राकृतिक आपदाओं की स्थिति में, धरती में सिस्मिक तरंग उत्पन्न होने के फलस्वरूप दुर्घटनाएं होती हैं। इन दुर्घटनाओं से उत्पन्न परिस्थितियों से रक्षा करने में सेंसर की भूमिका वैज्ञानिक शोध-कार्यों में एक सराहनीय कदम तो होगा ही साथ ही राष्ट्र-हित के लिए

गौरव की बात होगी। अत: उपरोक्त परिस्थितियों के उत्पन्न होने की प्रारम्भिक अवस्थाओं की मॉनिटरिंग के लिए फाइबर ऑप्टिक सेंसर प्रणाली उत्तम कार्य कर सकती है।

फोटोनिक्स विज्ञान में कई फाइबर-ऑप्टिक सेंसरों के निर्माण किए जा चुके हैं, जो कंक्रीट, धातु तथा वैमानिकी संरचनाओं के स्वास्थ्य मॉनिटरिंग अध्ययन के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। उन्हीं में से एक सेंसर है - फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर जिसकी इस वैज्ञानिक लेख/पत्र में चर्चा की गई है।

फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग क्या है?

फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर के कार्य-सिद्धांत को समझने से पहले हम ग्रेटिंग के बारे में जानें कि यह क्या है?

"ग्रेटिंग" अंग्रेजी का शब्द है जिसे हिंदी में 'झंझरी' के रूप में व्यक्त किया जा सकता है जिसकी तिल्लियां एक दूसरे के बीच समान दूरी पर अथवा आवधिक (Periodic) हों। घर की पारम्परिक लोहे की छड़ वाली खिड़की का मॉडल भी ग्रेटिंग का उदाहरण है जिसमें लोहे की छड़ समान दूरी पर सजी होती हैं। धातु की प्लेट पर खोदी गई समानान्तर धारियां जो आर्वतक हों, इसे यांत्रिक ग्रेटिंग का नाम दे सकते हैं।

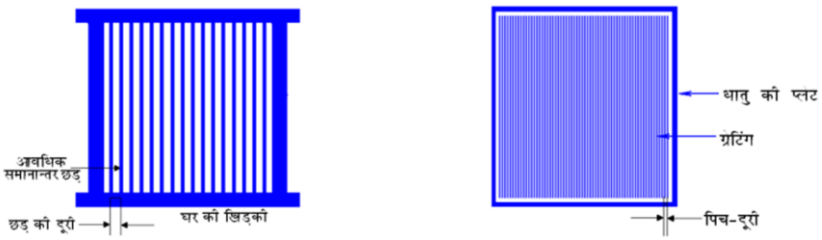

(अ)घर की खिड़की में आवधिक रूप में सजी धातु की छड़ (ब)धातु की प्लेट पर खोदी गई आवर्तक धारियां

चित्र 1(अ एवं ब) : यांत्रिक ग्रेटिंग मॉडल

फोटोनिक्स विज्ञान में ग्रेटिंग की परिभाषा इस प्रकार है - फाइबर के अन्दर स्थित कोर पदार्थ में स्थाई रूप से परिवर्तित आवधिक वर्तनांक (Periodic Modulation of Refractive Index in the Core of Fiber) को ग्रेटिंग कहते हैं। ग्रेटिंग फाइबर के कोर में होलोग्राफी व्यतिकरण से उत्पन्न फ्रिंज

पट्टिकाओं अथवा पराबैंगनी किरणों को सीधे फेज़मास्क पर आपतित करते हुए बनाया जाता है।

फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर का कार्य-सिद्धांत

विलियम लॉरेंस ब्रैग नामक वैज्ञानिक ने अपने शोध कार्य में पाया कि यदि ग्रेटिंग से होकर प्रकाश गमन कराया जाए तो कुछ प्रकाश तरंगदैर्घ्य आवर्तित होकर बाहर निकल जाती हैं परन्तु एक विशिष्ट प्रकाश-तरंगदैर्घ्य (λ_2) उच्च तीव्रता के साथ परावर्तित हो जाती है। यह परावर्तित प्रकाश तरंगदैर्घ्य ब्रैग तरंगदैर्घ्य (λ_B) कहलाती है जो ग्रेटिंग के 'पिच' पर निर्भर करती है। ग्रेटिंग बैण्ड-पास फिल्टर की तरह कार्य करता है जो उच्च तीव्रता की तरंगदैर्घ्य को फिल्टर करके परावर्तित कर देता है। यह परावर्तन (Reflectivity) लगभग 95% तक हो सकता है। देखें रेखाचित्र-2:

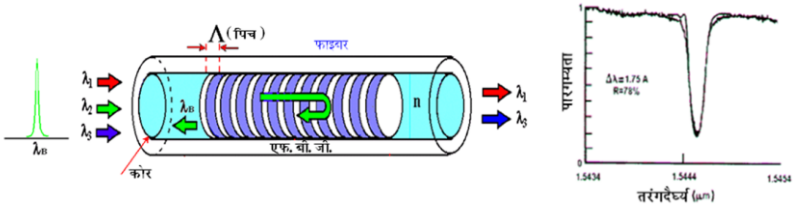

चित्र-2 : फाइबर-कोर में ब्रैग ग्रेटिंग निरूपण तथा तरंगदैर्घ्य की परावर्तन प्रतिक्रिया

ब्रैग ने परावर्तित इस तरंगदैर्घ्य (λ_2) को नीचे लिखे समीकरण द्वारा प्रतिपादित किया,

$$\lambda_B = 2n_{eff}\,\Lambda$$

जहां, $\lambda_B(=\lambda_2)$ ब्रैग तरंगदैर्घ्य है जो ग्रेटिंग के बीच पिच दूरी (Λ) के समानुपाती है। n_{eff} फाइबर के कोर-माध्यम के पदार्थ का प्रभावी वर्तनांक है। ब्रैग के इस नियम को फाइबर ऑप्टिक सैंसर के साथ सत्यापित किया गया। फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग में जब इन्फ्रारेड प्रकाश संचारित किया जाता है तो परावर्तित ब्रैग तरंगदैर्घ्य (λ_B) का मान कोर के प्रभावी वर्तनांक (n_{eff}) तथा ग्रेटिंग के बीच पिच की दूरी (Λ) पर निर्भर करता है। प्रकाश स्रोत के अनुसार यह मान 800 नै.मी. से 1620 नै.मी. तक के बीच हो सकता है, परन्तु फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग के लिए संचार-बैंड प्रकाश स्रोत (C-Band light source) 1525 नै.मी. से 1565 नै.मी. तक उपयुक्त है। ब्रैग तरंगदैर्घ्य किसी संरचना में तापमान, दाब (संपीडन) तथा तनाव बढ़ने से स्थानान्तरित (shift) हो जाता है। दूसरे अर्थ में तापमान, दाब तथा तनाव के संवेदन करने में फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सक्षम है। अतः फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग को एक सेंसर (संवेदक) के रूप में स्वीकार किया गया है।

फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर की बनावट

फाइबर-कोर में ब्रैग ग्रेटिंग लिखने की मुख्यत: तीन पद्धतियां प्रचालित हैं:

(क) होलोग्राफी की व्यतिकरणमिती पद्धति (Holographic Interferometry Method)

(ख) बिन्दु-दर-बिन्दु पद्धति (Point-by-Point Method)

(ग) फेज़मास्क पद्धति (Phase Mask Method)

उपर्युक्त तीनों पद्धतियों में पराबैंगनी किरणों में फोटो सेंसिटिव फाइबर के कोर को अनावरित कर ग्रेटिंग लिखी जाती हैं। तीनों पद्धतियों की प्रक्रिया अलग-अलग है। होलोग्राफी विधि में पराबैंगनी किरणों के द्वि-बिम्ब व्यतिकरण पट्टिकाओं (Two beam interference pattern) में फाइबर के कोर को अनावरित करके एफ.बी.जी. लिखी जाती है। बिन्दु-दर-बिन्दु विधि में एक जगह स्थित लेज़र के बिम्ब से होकर चरण-बद्ध तरीके से अनावरित करते हुए फोटो संवेदनशील फाइबर के कोर को गुजारा जाता है। इस पद्धति से लम्बे आवधिक ग्रेटिंग (100-1000 माइक्रोन) लेखन ही संभव हैं क्योंकि ग्रेटिंग के बीच पिच की दूरी 100 माइक्रोन की अवधि से कम आसानी से संभव नहीं है जो एफ.बी.जी. की शर्त को संतुष्ट कर सके । फेज़मास्क पद्धति द्वारा फाइबर कोर में "कंटेक्ट-प्रिंटिंग" प्रक्रिया से ग्रेटिंग लिखी जाती है तथा इसमें कम कम्पन-संवेदनशीलता होती है।

फेज़मास्क पद्धति द्वारा फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग लेखन

फेज़मास्क पद्धति में फ्यूज्ड सिलिका से बने फेज़मास्क, जो एक राहतयुक्त सतह की ग्रेटिंग (Surface Relief Grating) है, को एक्साइमर लेज़र (जो 248 नै.मी. तरंगदैर्घ्य की पराबैंगनी किरण उत्पन्न करता है) से प्रकाशित किया जाता है। फेज़मास्क की तीक्ष्ण ग्रेटिंग से विवर्तित धनात्मक और ऋणात्मक प्रकाश किरणों को शून्य-आर्डर में संपीडित (suppression) करते हुए दो दर्पणों द्वारा एक स्थान पर व्यतिकरण कराया जाता है। व्यतिकरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न प्रकाशकीय व्यतिकरण-पट्टिका (Optical Interference Pattern) के सम्पर्क में एक विशिष्ट प्रकार के फाइबर के कोर, जो 248 नै.मी. तरंगदैर्घ्य से युक्त पराबैंगनी किरणों में संवेदनशील है; को अनावरित (Expose) किया जाता है जिसे चित्र-3(अ) एवं 3(ब) में दर्शाया गया है।

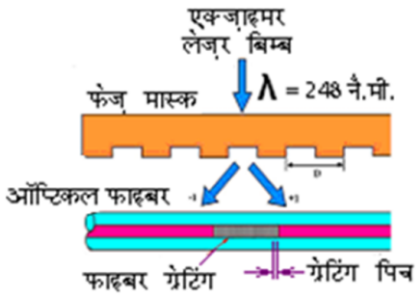

चित्र-3(अ) : ग्रेटिंग लेखन की रेखीय प्रदर्शनी

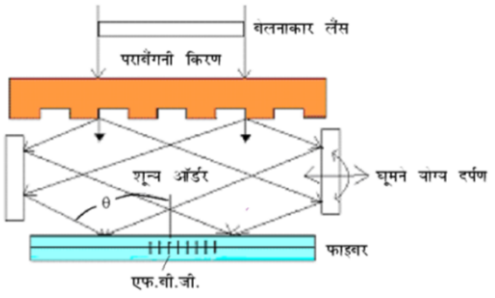

चित्र-3 (ब): प्रकाशकीय व्यतिकरण पैटर्न की रेखीय प्रदर्शनी

प्रकाशकीय व्यतिकरण पट्टिका आवधिक होने से उसके अनुरूप ही फाइबर के कोर का वर्तनांक स्थाई रूप से बदल जाता है। अत: फाइबर के कोर में परिवर्तित आवधिक वर्तनांक को ही फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग कहते हैं तथा इस प्रभावी वर्तनांकों के आवधिक पैटर्न की कुल लम्बाई को फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर कहते हैं। एफ.बी.जी. सेंसर की लम्बाई आवश्यकतानुसार 5 मि. मी. से 25 मि. मी. तक हो सकती है। ग्रेटिंग लेखन में अनावरित (Bared) फाइबर का प्रयोग किया जाता है जो आसानी से स्फुटन योग्य (Fragile) होता है। अत: इनमें मजबूती प्रदान करने के लिए पोलीमाइड कोटिंग की अति आवश्यकता होती है। इस प्रक्रिया के लिए एक विशिष्ट प्रकार की कोटिंग मशीन उपलब्ध है। बाद में यांत्रिक रूप से मज़बूती प्रदान करने के लिए एफ.बी.जी. की एनीलिंग इसे 24 घंटे ओवन के अन्दर 150^0C तापमान पर रखकर की जाती है। ग्रेटिंग लिखने के लिए 248 नै.मी. के प्रकाश में संवेदनशील फाइबर कोर का पदार्थ जर्मेनियम-डोप्ड, बोरोन-डोप्ड, टीन-डोप्ड अथवा हाइड्रोजिनेटेड सिलिका फाइबर हो सकता है। केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण सगंठन, चण्डीगढ़ में स्थापित विशिष्ट प्रणाली द्वारा एफ.बी.जी. लेखन कार्य प्रगति पर है, देखें चित्र-4 ।

चित्र-4 : एक्साइमर लेजर प्रणाली द्वारा फेजमास्क पद्धति से फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग लेखन

फाइबर सेंसर की पैकेजिंग

चूंकि ग्रेटिंग लिखने के लिए फाइबर को जैकेट तथा एक्रायलेट पदार्थ की कोटिंग से मुक्त कर देते हैं, इसलिए ग्रेटिंग लिखने के बाद इसे संभाल कर रखना भी परमावश्यक है अन्यथा इसके टूटने की संभावना अधिक रहती है। अतः सुरक्षा की दृष्टि से फाइबर सेंसर की पोलिमर कोटिंग करना तथा अनुप्रयोगों के लिए किसी फिक्सचर में बॉण्ड करना या दबाना नितान्त आवश्यक होता है। धातु संरचनाओं पर एफ.बी.जी. से युक्त फिक्स्चर को सीधे वेल्डिंग किया जा सकता है तथा कंक्रीट संरचनाओं के अन्दर दबाया (Embed) जा सकता है, देखें चित्र-5 :

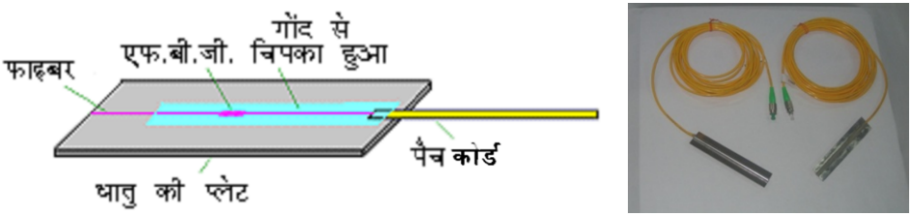

चित्र 5 : संरचनाओं के स्वास्थ्य मॉनिटरिंग (SHM) के लिए विभिन्न प्रकार के पैकेजिंग फिक्स्चर

फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर के लाभ (Advantages)

एफ.बी.जी. सेंसर के कई लाभ हैं। उनमें से कुछ लाभों को नीचे बताया गया है:

1. लम्बे समय के लिए स्थायी रूप से संरचनात्मक स्वास्थ्य मॉनिटरिंग (Structural Health Monitoring) के लिए उपयुक्त।
2. संशोधन (कैलिब्रेशन) की जरूरत नहीं पड़ती है।
3. एक फाइबर केबल में 64 वितरित होने योग्य एफ.बी.जी. सेंसर हो सकते हैं।
4. आसानी से स्थापित तथा हस्तान्तरित होने योग्य।
5. फाइबर-केबल कई किलोमीटर तक डाली जा सकती है, लम्बाई की कोई सीमा नहीं होती।
6. फाइबर-ऑप्टिक सेंसर में प्रकाश सिगनल प्रयुक्त होता है, विद्युतीय चिंगारी का खतरा नहीं रहता। आन्तरिक रूप से तेल या ज्वलनशील रासायनिक पर्यावरण के लिए सुरक्षित है।
7. कोई विद्युत-चुम्बकीय व्यतिकरण (EMI)या रेडियो आवृत्ति व्यतिकरण (RFI) नहीं होता, यह विद्युतीय, इलैक्ट्रॉनिक तथा परमाणु संयंत्रों के लिए उपयुक्त है।
8. मल्टीप्लेक्सिंग एवं वितरित होने योग्य संवेदन में आसानी।
9. तनाव व तापमान के साथ अच्छा रेखीय प्रदर्शन।

10. भविष्य में एफ.बी.जी. युक्त इमारतों, वायुयानों, नलिकाओं एवं टैंकों में द्रव्य रिसाव वाली संरचनाएं स्मार्ट-संरचनाओं के रूप में सक्षम।

फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर के अनुप्रयोग

फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर के अनुप्रयोगों (Applications) के वृहद् क्षेत्र हैं। किसी भी संरचना में उत्पन्न तापमान, दाब तथा तनाव संवेदन करने में फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग सेंसर सक्षम है। फाइबर ब्रैग ग्रेटिंग द्वारा सिविल, यांत्रिक, एवं वैमानिकी संरचनाओं के स्वास्थ्य मॉनिटरिंग, पेट्रोल-संदूषण जांच, कृषि अनुसंधान, आयुर्विज्ञान एवं सर्जरी, फार्मासियुटिकल प्रौद्योगिकी में तापमान तथा लेवल नियंत्रण, ऑटोमोबाइल इंजनों के तापमान, दाब तथा तनाव मॉनिटरिंग, भूकम्प तथा सुनामी की संभावनाओं की तत्काल चेतावनी, रेल-पटरियों तथा सेतु मॉनिटरिंग, औषधियों एवं जैविक-यांत्रिकियों की संवेदन प्रणालियों तथा वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्रों में काफी सहायता प्राप्त होती है।

संकलण: गोपाल चन्द्र पोद्दार, उमेश तिवारी, गंगा शरण सिंह
सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

कृषि प्रयोग के लिए इलैक्ट्रोस्टेटिक स्प्रेयर

खाद्य वस्तुओं की बढ़ती माँग और बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कृषि क्षेत्र में उत्पादकता को बढ़ाना हमेशा से ही भारतीय योजना और नीति निर्माताओं के लिए चिंता और चुनौती का विषय रहा है। कृषि विकास की इस प्रक्रिया में आधारभूत मानवीय ज़रूरतों को पूरा करने तथा खाद्यान्न उत्पादन को बढ़ाने के लिए कीटनाशकों का प्रयोग अनेक भयानक बीमारियों और कीड़ों से पौधों की सुरक्षा के रूप में किया जाना हैं। भारत गाँवों का देश है, अनेक सरकारी शोध संस्थानों के अनुसार हमारे देश की लगभग 53% आबादी किसी न किसी रूप में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कृषि में कार्यरत हैं। यद्यपि हमारे देश में कीटनाशकों का प्रयोग दूसरे देशों की तुलना में कहीं बहुत कम होता है लेकिन भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (आईएआरआई) की शोध की मानें तो भारतीय कृषि में कीटनाशकों के अवशेष बहुत अधिक हैं जिससे अनेक प्रकार के प्रदूषणों का खतरा बढ़ता जा रहा है। इन सभी प्रदूषणों को वैज्ञानिक तकनीकों की सहायता से काफी हद तक कम किया जा सकता है। स्थिर वैद्युतबल क्षेत्र (एलैक्ट्रोस्टैटिक) एक ऐसी तकनीक है जिसका प्रयोग न सिर्फ कृषि क्षेत्र में बल्कि अन्य क्षेत्रों में भी किया जाता है, जैसे इलेक्ट्रोस्टैटिक प्रिंटिंग चिकित्सा के क्षेत्र में इलेक्ट्रोस्टेटिक अवक्षेपक इत्यादि।

स्वस्थ एवं उन्नत खेती के लिए मूल्यांकन और परामर्श के आधार पर कीटनाशक दवाओं का छिड़काव उचित मात्रा में करते हैं। कीटनाशक दवाओं का प्रयोग खेती-बाड़ी में, फसलों और पेड़ों को कीड़ों और बीमारियों से बचाने का सबसे सरल और उपयोगी तरीका है। कीटनाशक दवाओं में कीटनाशी, फफूंदीनाशी, वनस्पतिनाशक और विभिन्न प्रकार के रोगाणु शामिल हैं। इनमें अधिकतर कीटनाशकों का प्रयोग हाइड्रॉलिक और पारंपरिक स्प्रे नोजल सिस्टम के द्वारा स्प्रे के रूप में किया जाता है। प्रचलित नोज़ल्स केवल फसलों की पत्तियों के ऊपर वाले भाग में ही कीटनाशक दवाओं का छिड़काव करने में सक्षम होती हैं। बूंदों के छोटे आकार, गैर रूपता और खुले स्प्रे के कारण कीटनाशक दवाओं के छिड़काव में 30% से भी कम की प्रभाव क्षमता पाई गई है। छोटी बूंदें हवा में खो जाती हैं और बड़ी बूंदें गुरुत्वाकर्षण प्रभाव के कारण अंततः पानी में घुल कर दोनो वायु और जल दोनों प्रकार के प्रदूषण को बढ़ावा देती हैं।

स्थिर वैद्युत बल क्षेत्र कृषि फसलों और बगीचों पर कुशलतापूर्वक कीटनाशक दवाओं को तरल स्प्रे

के रूप में सुरक्षात्मक तरीके से लागू करने की एक बेहतर विधि है। इस विधि द्वारा कीटनाशक दवाओं के छिड़काव में एकरूपता प्राप्त की जा सकती है। इस विधि द्वारा कीटनाशक छिड़काव में प्रमुख चुनौती छोटी बूंदों को चार्ज करने के लिए एक विश्वसनीय साधन के विकास में निहित है। पार्टिकुलेट आवेषण तरीकों में कोरोना निर्वहन, प्रत्यक्ष संपर्क चार्ज और प्रेरण चार्ज इत्यादि शामिल हैं।

यह सर्वविदित है कि प्रेरण आधारित चार्जिंग के लिए जरुरी है कि तरल स्प्रे चालक हो। आवेषण प्रक्रिया को निम्नांकित चित्र 1 में दर्शाया गया है। चार्जिंग प्रक्रिया के लिए एक रिंग इलैक्ट्रॉड प्रयोग में लाते हैं। स्प्रे सिस्टम में इलैक्ट्रॉड की स्थिति ब्रेकअप लम्बाई पर आधारित होती है।

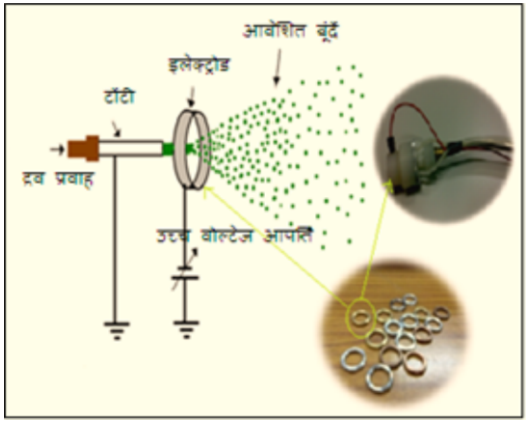

चित्र1 : स्प्रे सिस्टम में इलैक्ट्रॉड की स्थिति और आवेषण प्रक्रिया

चार्जिंग के लिए प्रयुक्त इलैक्ट्रॉड सामग्री के चयन पर बहुत कम अनुसंधान कार्य किया गया है। स्थिरवैद्युत छिड़काव में इलैक्ट्रॉड के लिए अब तक सबसे अधिक इस्तेमाल सामग्री तांबे और पीतल की थी। इस लेख में एक नई इलैक्ट्रॉड सामग्री नकल (Ni) के प्रयोग का उल्लेख किया गया है।

प्रयोग व्यापक परिवेश की स्थिति में हवा वातावरण (तापमान = 16 ± 2^{0} सेल्सियस, तुलनात्मक आर्द्रता =$57\pm3\%$) हवा फीड दर (18.5 लीटर/मिनट) और तरल फीड दर (90 मिलिलीटर/मिनट) में आयोजित किया गया है। हवा-सहायित स्प्रे नोज़ल सिस्टम में हवा की कम्प्रेशर (सांके, मॉडल एस. 11) द्वारा, हवा फीड दर 18.5 लीटर/मिनट के साथ आपूर्ति की गई थी। लागू वोल्टेज 0 वोल्टेज से

5.0 किलोवोल्ट (उच्च वोल्ट पैक 20 किलोवोल्ट के, 1.5 मिलिएम्पीयर, 30 वॉट) तक लागू किया गया था। विकसित इलैक्ट्रोस्टैटिक कीटनाशक स्प्रेयर को चित्र संख्या 2 में दर्शाया गया है।

चित्र 2: हवा सहायातित इलैक्ट्रोस्टेटिक कीटनाशक स्प्रेयर

यह छोटे और विकासशील देशों के किसानों के लिए एक बहुत ही उपयोगी उपकरण है जो कि खेतीबाड़ी और पेड़ों में कीटनाशक दवाओं के छिड़काव के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। इकाई प्रयोगकर्ताओं द्वारा क्षेत्र स्तर पर तैनाती के लिए तैयार है।

संकलण: मनोज कुमार पटेल

सीएसआईआर – केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन (सीएसआइओ), चण्डीगढ़

सीएसआईआर–सूक्ष्मजीव प्रौद्योगिकी संस्थान, सैक्टर 39–ए, चण्डीगढ़
सीएसआईआर–केन्द्रीय वैज्ञानिक उपकरण संगठन, सैक्टर 30–सी, चण्डीगढ़